श्री

भक्ति ज्ञान वैराग्य प्रकाश

इस पुस्तक में
मनोहर उपदेश, भावपूर्ण व्याख्यान्, दृष्टान्त,
भजन तथा अद्भुत शेयर दिये गए हैं ।

—:***:—

लेखक:—
श्री श्री १०८ स्वामी परमानन्द जी महाराज उदासीन
हरिद्वार ।

—:***:

प्रकाशक :
अर्जुनसिंह अमरजीतसिंह बुकसेलर,
हरिद्वार ।

[...चम संस्करण] [मूल्य ३ रुपए

* श्री राम *

* विषय-सूची *

मनुष्य जन्म की दुर्लभता और उद्देश्य

भजन

आके दुनियां में अगर प्रेम प्रभु से न किया ।
मौत अच्छी थी भला जिन्दगी पाकर क्या किया ।।१।।
नाम और दाम की खातर जो तू पच पच के मुआ ।
हैफ पर साथ तेरा एक ने आखर न दिया ।।२।।
यूं तो सब काम किये तूने जहां में आकर ।
आया था जिसके लिये काम वह बिल्कुल न किया ।।३।।
सौदे दुनियां के किये जिल्लतो घाटे भी सहे ।
था यफ़ा जिसमें छिपा राम से सौदा न किया ।।४।।
बहरे दुनियां में पड़े लाखों ही गोते खाये ।
न किया फिर भी तो मूर्ख ने किनारा न किया ।।५।।
हक ने चोला था दिया तुझको कि सीता तू इसे ।
फाड़ तो डाला मगर तूने वह चोला न सिया ।।६।।
ऐ 'शहनशाह' जो रहा दुनियां के धन्दों में फंसा ।
नीमजां समझो उसे आधा मुआ आधा जिया ।।७।।

सज्जनों ! प्रत्येक बुद्धिमान मनुष्य के हृदय में यह प्रश्न स्वाभाविक ही उत्पन्न होता है कि मनुष्य जन्म का उद्देश्य क्या है ? क्योंकि हम देखते हैं कि परमात्मा ने संसार में कोई वस्तु भी ऐसी नहीं बनाई, जो निष्प्रयोजन हो अर्थात् जिसके संसार में उत्पन्न होने का कुछ फल न हो जो किसी भी काम में न आती हो ।

दृष्टान्त नं० १

कहते हैं, आयुर्वेद के किसी आचार्य ने अपने एक शिष्य को जंगल की समस्त जड़ो-बूटियों के गुण, अवगुण समझा कर एक दिन परीक्षा लेने के निमित्त उससे कहा- बेटा ! जंगल में जाओ और कोई ऐसी जड़ी-बूटो ढूंढ कर लाओ जो परमात्मा ने व्यर्थ ही बनाई हो, जिसके उत्पन्न करने का कुछ भी प्रयोजन न हो ।

यद्यपि गुरुदेव की दी हुई विद्या के आधार पर वह शिष्य यह बात भली प्रकार जानता था, कि परमात्मा ने संसार में कोई वस्तु भी निष्प्रयोजन नहीं बनाई, तथापि गुरु की दी हुई आज्ञा को शिरोधार्य करते हुए शिष्य ने सत्त वचन कहा और जंगल की राह ली । वहां जाकर उसने जंगल की प्रत्येक जड़ी-बूटी को देखा, परन्तु उसे कोई ऐसी बूटी अथवा तिनका मात्र भी दिखाई न दिया, जो किसी काम में न आती हो, जिसे परमात्मा ने व्यर्थ ही बनाया हो ।

अन्ततोगत्वा, शिष्य ने वापिस आकर गुरुदेव के चरणों में नमस्कार किया और हाथ जोड़ कर बोला प्रभो ! मैंने जंगल का एक-एक पत्ता देख लिया, परन्तु आपकी दी हुई विद्या के आधार से मुझे तो एक तिनका भी ऐसा दिखाई नहीं दिया 'जो परमात्मा ने व्यर्थ ही बनाया हो। जिसके उत्पन्न करने का संसार में कुछ उद्देश्य न हो। इस प्रकार शिष्य की बुद्धिमता को देखकर गुरुदेव अति प्रसन्न हुए। कहा भी है :—

श्लोक

दन्तस्य निष्कोषण केन नित्यं, कर्णस्य कण्डूय केन वापि।
तृणेन कार्यं भवतीश्वराणां, किमँग वाग्घस्त बता नरेण॥

भावार्थ यह है कि हे प्यारे ! जबकि दांत का मेल निकालने के लिये, कान की खुजली दूर करने के लिये भी महान पुरुषों को एक तिनके के प्रति कार्य पड़ जाता है। अर्थात् जबकि परमात्मा ने एक तिनका मात्र भी निष्फल नहीं बनाया, तब जिह्वा, हस्त आदि दिव्य अंगों सहित इस मनुष्य शरीर का तो क्या कहना है, अर्थात् यह तो किसी महान उद्देश्य की पूर्ति के लिये बनाया गया है। सज्जनों ! संसार में जो वस्तु जितनी दुर्लभ होती है, उतनी उसकी कीमत भी अधिक हुआ करती है और उसके संसार में होने का उद्देश्य भी बड़ा हुआ करता है। देखिए मिट्टी से लोहा

दुर्लभ है, इसलिये मिट्टी की अपेक्षा उसकी कीमत भी अधिक है और उद्देश्य भी बड़ा है। इसी प्रकार चांदी, सोना, जवाहरात आदि के सम्बन्ध समझ लेना चाहिये। अब यदि कोई मनुष्य मिट्टी के स्थान में चांदी सोना आदि को लगाना शुरु कर दे, तो सब लोग उसे देखकर यही कहेंगे कि देखो ! यह कितना मूर्ख है जो मिट्टी के स्थान में सोना चांदी को लगा रहा है।

अब मनुष्य जन्म कितना दुर्लभ है, इस विषय में एक कवि इस प्रकार लिखते हैं।

—॥ चौपाई ॥—

बीस लाख अस्थावर जानो नौ लाख पुनि जलचर मानो।
ग्यारह लाख कूर्म कवि गाये, पंछी गण दस लाख बताये॥
तीस लाख पशु जानो भाई, चार लाख बानर सुखदाई।
यह चौरासी जब कट जावे, तब मनुष्य के तन को पावे॥

दृष्टान्त नं० २

कहते हैं किसी राजा ने एक बड़ी गोलाकार सराय बनवाई और उसमें चौरासी दरवाजे रखे और आज्ञा दी कि जो कोई मुसाफिर इस सराय में आवे उसे यथायोग्य आराम दिया जाय, मुसाफिर धड़ाधड़ आने शुरू हुये परन्तु राजा ने सब दरवाजे बन्द करवा दिए, केवल एक दरवाजा बाहर जाने आने को खुला रखा।

दैवयोग से एक सूरदास का भी उस सराय में आना हो गया, कुछ दिन रहने के पश्चात् जब उसे बाहर जाने की इच्छा हुई तब उसने दीवार का आश्रय लेकर चलना आरम्भ किया। एक दरवाजा आया तब उसे भी बन्द पाया। इस प्रकार वह दीवार के आश्रय से आगे बढ़ता जाता था, परन्तु जो भी दरवाजा आता उसे बन्द ही पाता था।

अन्त में जब वह उस खुले दरवाजे पर पहुँचा तो उसे सिर में खुजली हो गई। उसने अपने हाथ को दीवार से हटाया और खुजली दूर करने लगा। साथ ही दो चार कदम आगे भी बढ़ गया। अब उसने दीवार हाथ रखकर चलना आरम्भ किया, परन्तु सब दरवाजों का बन्द ही पाया, अन्त में जब फिर वह खुले दरवाजे पर पहुँचा तो उसके पीठ में खुजली शुरू हो गई, उसने अपना हाथ दीवार से हटाया और खुजली दूर करने लगा, साथ ही दो चार कदम आगे भी बढ़ गया।

जब पुनः दीवार पर हाथ रखकर चलना शुरू किया, तो फिर उन्हीं बन्द दरवाजों को ही पाया। कई बार उसके साथ यही हाल हुआ, और वह अत्यन्त दुःखी हो गया।

अन्त में एक महात्मा की दृष्टि उस सूरदास पर पड़ी उन्हें दया आई, उन्होंने सूरदास का हाथ पकड़ा और उसे

इस खुले दरवाजे द्वारा सराय से बाहर कर दिया, तब वह अपने घर में जाकर सुख पूर्वक रहने लगे।

यह तो दृष्टान्त हुआ, दृष्टान्त यह कि पारब्रह्म परमात्मा रूपी राजा ने यह संसार रूपी एक गोलाकार बड़ी सराय बनाई है। चौरासी लाख योनियां उसमें दरवाजे हैं। हर प्रकार के जीवरूपी मुसाफिर उसमें आकर आराम पाते हैं। मनुष्य शरीररूपी एक खुला दरवाजा है जिसकी राहसे जीव रूपी मुसाफिर इस संसार रूपी सराय से बाहर होकर जन्म-मरण के चक्कर से छुटकारा पा सकता है।

विवेक रूपी नेत्र न होने के कारण यह जीव अन्धा हो रहा है। जब कभी प्रभु कृपा से इसे मनुष्य शरीररूपी खुले दरवाजे की प्राप्ति होती है तब स्त्री पुत्र, धनादि में मोह रूपी खुजली इसको लग जाती है। यह उसी के खुजलाने में मनुष्य जन्म रूपी खुले दरवाजे में खो बैठता है और फिर चौरासी के चक्कर में पड़ दुःख पाता है।

अन्त में जब श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ गुरुकी इसे प्राप्ति होती है। तब वह दया करके इसका हाथ पकड़ इसे इस संसार रूपी सराय से बाहर निकाल देते हैं, अर्थात् इसे विवेक विचार रूपी नेत्र प्रदान करते हैं। जिससे यह साधन सम्पन्न हुआ, प्रभु भक्ति द्वारा अनायास ही जन्म-मरण रूपी संसार बन्धनों से मुक्त हो पारब्रह्म परमात्मा में लीन हो

जाता है और परमानन्द का अनुभव करता है।

सज्जनों ! काम बिगाड़ दिया बेसमझी ने, काम बिगाड़ दिया हमारी भूल ने। दयालु परमात्मा ने हमें स्त्री, पुत्र, धन, मकानादि इसलिये दिये थे, कि हम इनको पाकर अनायास ही परमात्माको पा सकें। अर्थात् स्त्री, पुत्र, धन, मकानादि साधनथे, और परमात्मा का पाना उनसे सिद्ध होने योग्य साध्य वस्तु रूप मनुष्य जन्म का उद्देश्य था।

सोचो ! जिसके पास रहने के लिए मकान नहीं हैं, खाने के लिए भोजन नहीं है। दुःख–सुख में काम आने के लिए स्त्री, पुत्र धनादि नही है, वह परमात्मा का भजन कैसे कर सकता है ? पंजाबी भाषा में कहावत है कि कुल्ली, गुल्ली, और जुल्ली तो हर एक को चाहिए। रहने के लिए मकान खाने के लिए रोटी ओढ़ने के लिए कपड़ा, इन तीनों चीजों की जरुरत तो सबको ही बनी रहती है। मिसाल मशहूर है।

"ढिड न पैंय्यां रोटियां सब्बे गल्लां खोटियां"

न कुछ देखा ज्ञान ध्यान में न कुछ देखा पोथी में।
कहत कबीर सुनो भाई साधो जो देखा सो रोटी में।।१।।
कबीर खुदआ कूकरी करत भजन मे भङ्ग।
ता को टुकड़ा डारि करि सिमरन करो निसङ्ग ।।२।।
कबीरा एता मांग हूं, जा में कुटुम्ब समाय।
मैं भी भूखा ना रहूं, साधु न भुखा जाय ।।३।।

कहने का भाव यह है कि स्त्री, पुत्र, धन मकानादि परमेश्वर का भजन करने के लिये साधन रूप हैं परन्तु हमसे बेसमझी यह हुई, भूल यह हुई कि हमने इन साधनों को ही मनुष्य का उद्देश्य समझ लिया और परमात्मा को प्राप्त करना रूप मनुष्य के लक्ष्य को सर्वथा भूल गये। अर्थात् अधिकाधिक स्त्री, पुत्र धनादि साधनों को, विषयों को एकत्रित करना ही हमने मनुष्य जन्म का उद्देश्य माना।

कोई कहता है तेरा धन माल कितना है।
कोई कहता है तेरा जाहोजलाल कितना है?
कोई कहता है कि बच्चा व बाल कितना है।
मगर कहता नहीं कोई प्रभु का ख्याल कितना है
कोई कहता है कि बस सारा जमाना हैं मेरा,
कोई कहता है कि खेशोयगान है मेरा।
कोई कहता है कि कारूँ का खज़ाना है मेरा।
यह कोई नहीं कहता कि शमशान ठिकाना है मेरा।२।

सज्जनों! यदि जन्म का यहि उद्देश्य हैं, जो कि हमने समझ रखा है तो फिर हम में और गौ भैसादि पशुओं में भेद ही क्या रहा?

श्लोक

आहार निद्रा भय मैथुनानि, सामाण्यमेतत् पशुभिर्नराणाम्।
ज्ञानं नराणा मधिको विशेषो, ज्ञानेन हीना पशुभिः समानः॥

कविता

मित्र मरे जो घात दे करन वाला,
पुत्र मरे जो आज्ञाकार नाहीं ।
राजा मरे जो प्रजा नूं दुःख देवे,
प्रजा मरे जो दिलों हितकार नाही ॥
शूम मरे जो धन नूं जोड़ जावे,
धनी मरे जो दिलों उदार नाहीं ।
नौकर मरे इनकार दे करन वाला ।
हाकम मरे इन्साफ दा यार नाहीं ॥
पंच मरे गरीबा नूं दुःख देवे,
जिसदे घर दी मुकदी कार नाहीं ।
शिष्य मरे जो सिदक नूं हार देवे,
गुरु मरे जो श्रेष्ठ आचार नाहीं ॥
रोगी मरे जो रहे हमेश दुखिया,
वैद्य मरे जिस दा दारु कार नाहीं ।
पुत्री मरे जो कुल नूं दाग लावे,
नूंह मरे जेहड़ी शर्मशार नाहीं ॥
ओह भी मरे संसार तो "ब्रह्मरूपा,"
जिसदा प्रभु दे नाल प्यार नाहीं ॥

सज्जनों ! मनुष्य जन्म का उद्देश्य हैं श्रेष्टाचार और निष्काम कर्मों द्वारा ईश्वर भजन करते हुये परब्रह्म परमात्मा

की प्राप्ति करना। क्योंकि मनुष्य योनि ही कर्म योनि है इसके अतिरिक्त जितनी भी योनियां हैं सब भोग योनियां हैं दूसरे शरीर बन्द दरवाजों की न्याई है जिनमें बुद्धि विवेक न होने के कारण हम उस परमात्मा तक नहीं पहुँच सकते, केवल यह मनुष्य शरीर ही एक ऐसा खुला दरवाजा है जिससे कि हम उस परमात्मा तक पहुच सकते हैं। अतः हम सबका यह मुख्य कर्तव्य है कि अपने पुरुषार्थ द्वारा इस नाशवान और क्षण भंगुर संसार की आशक्ति का सर्वथा त्याग करके सत्संग और ईश्वर भजन की चेष्टा करें। इस दुर्लभ मनुष्य शरीर का यही मुख्य उद्देश्य है।

कबीर मानस जन्म दुर्लभ है होइ न बारै बार।
जिऊं बन फल पाके भोइ गिरहि बहरि न लागहि डार ॥
नजम-नर तन पाय यत्नकर ऐसा जिससे वह करतार मिले।
ऐसी उत्तम जून पदार्थ न फिर बारम्बार मिले ॥
यज्ञ, दान और पूजा पाठ सब इसी जून में होते हैं।
अगली जून में वही काटते जो कुछ इसमें बोते हैं ॥
नर देही को पाकर भी जो इसको यूं ही खोते हैं।
'परमानन्द' वह नहीं जागते घोर नींद में सोते है।३।
सच्चा सुख आनन्द की पदवी उनको न जिनहार मिले।
नर तन पाया यत्न कर ऐसा जिससे वह करतार मिले।४।

" हरि ओ३म् ततसत् "

प्रभु भक्ति

भजन

मग्न ईश्वर की भक्ति में अरे मन क्यों नहो होता ।
पड़ा आलस्य में मूर्ख रहेगा कब तलक सोता ॥१॥
जो खाहिश है तेरी कट जाए सारी मैल पापों की ।
प्रभु के प्रेम जल में क्यों नहीं अपने को तू धोता ॥२॥
विषय और भोगो में फंसकर न कर बरबाद जीवन को ।
दमन कर चित्त की बृत्ति लगाले योग में गोता ॥३॥
नहीं संसार की वस्तु कोई भी सुख का हेतु है ।
बृथा उसके लिये मूर्ख समय अनमोल क्यों खोता ॥४॥
कदापि शान्ति सुख का नहीं फल मिल सके उसको ।
धर्म के बीज को अन्त करण में जो नहीं बोता ॥५॥
धर्म ही एक ऐसा है जो होगा अन्त का साथी ।
न औरत काम आयेगी, न बेटा और कोई पोता ॥६॥
भटकता जा बजा फिरता है क्यों सुख के लिये मूर्ख ।
तेरे हृदय के अन्दर ही बहे आनन्द का सोता ॥७॥

दृष्टान्त नं० ३

किसी ग्रामके बाहर एक कुटिया थी । वहां एक भजनी
महात्मा रहते थे, लोग उनके पास सत्संग के लिये जाय

करते थे, एक दिन कोई सज्जन उनके पास पहुंचा और जाकर प्रार्थना की, महाराज ! मुझे भगवान ने कुछ नहीं दिया, बहुत दुःखी हूं, महात्मा बोले-भाई भगवान ने तो तुझे बहुत कुछ दे रखा है, परन्तु तुझे उसकी कदर नहीं है। वह बोला महाराज ! मैं कैसे जानूं कि भगवान ने मुझे बहुत कुछ दे रखा है, महात्मा बोले—मैं तुझे अपने सेवक से एक सौ रुपया ले दूंगा मुझे अपनी एक अंगूली काट दे वह बोला महाराज ! यह कैसे हो सकता है ? महात्मा यह नहीं हो सकता तो तुझे मैं ५०० रुपया सेवक से ले दूँगा, तू मुझे अपना एक कान काट दे, वह बोला— महाराज ! यह कैसे हो सकता है ? महातमा बोले यह नहीं हो सकता तो मैं तुझे सेवक से १००० रु० ले दूंगा तू मुझे अपना एक नेत्र निकाल दें। वह बोला महाराज एक हजार क्या ? यदि आप मुझे एक लाख रुपया भी दिलवा दें, तो भी मैं अपने शरीर का कोई अंग काट कर देने को तैयार नहीं हूं। महात्मा बोले फिर तू क्यों कहता है कि परमात्मा ने मुझे कुछ नहीं दिया। प्यारे यह तो शरीर की बात है यदि तू अपनी आतम स्वरूप चिन्तामणि को समझ जाये तब तो तू शहन्शाहों का भी शहन्शाह है।

'भीखा ! भूखा को नहीं सबकी गठड़ी लाल।
गिरह खोल नहीं देखते इस विधि भये कंगाल ॥१॥

देवन हारे दे दिया दीनी मनुष देह ।
आगे तेरा काम है जो चाहे कर लेह ॥२॥

महात्मा जी के यह वचन सुनकर वह सज्जन बहुत लज्जित हुआ, अपनी भूल की क्षमा माँगो । और प्रतिदिन महात्मा जी के पास आने लगा । तब महात्मा जी ने उसे प्रथम कर्म का, फिर उपासना का और अन्त में ज्ञान का उपदेश दिया, जिससे वह सब प्रकार की दीनता दरिद्रता से रहित हो, अपने स्वरुप मे आनन्दित रहने लगा ।

दृष्टान्त नं० ४

शेख सादी साहिब मुसलमानों में एक विद्वान प्रसिद्ध फकीर हुए हैं । वह अपनी पुस्तक में लिखते हैं कि एक समय मेरे पांओं में जूता न था, और मैं खुदा का गिला करता था कि उसने मुझे कितना निर्धन बनाया है कि मेरे पास जूता पहनने की भी सामर्थ्य नहीं है ।

कुछ दिन बाद जब मैं नमाज पढ़ने मस्जिद में जा रहा था, मुझे एक अपाहिज मिला, जिसके न हाथ थे न पांव तब मैं उसी वक्त सिजदे में गिरा और खुदा का शुक्र किया कि उसने मुझे पांव तो दिये हैं। क्या हुआ जो उनमें जूता नहीं है ।

बैत पंजाबी

जीमें, जन्म मनुष्यदा जान औखा बिरथा एसनूं न गवामित्र ।
बड़े पुण्य जद जीवदे जमां हुन्दे मिले जन्म मनुष्यदा आमित्र ।
अंग-२ दे वल्ल ध्यान कर खां इक अंग दा मुल्ल तां पामित्र ।
लख चरचयां इक अंग मिलदा भावें पुछ सौदागरां जा मित्र ।

कवित्त

कान के गए ते कहां कान ऐसे होत मूढ़ ।
नैन के गये ते कहां नैन ऐसे पाईये ॥
नासिका गए ते कहां नासिका सुगन्धित लेते ।
जिह्वा गए ते कहां जिह्वा जैसो गाईये ॥
हाथ के गए ते कहां हाथ जैसो काम होत ।
पाओं के गए ते कहां पाओं जैसो धाईये ॥
याहि ते विचार देख 'सुन्दर' कहत तोहि,
देह के गये ते कहाँ देह ऐसी पाईये ॥

इस प्रकार दुर्लभ मनुष्य शरीर को पाकर यदि हमने उस परमपिता परमात्मा का भजन न किया तो हम मूर्ख है हम अज्ञानी हैं क्योंकि हमने परमात्मा की दी हुई वस्तु का उस तरह सदुपयोग न किया जिस तरह भोजन के लिये दी हुई सामग्री का सदुपयोग दो वैष्णवी ब्राह्मणो ने न किया था ।

दृष्टान्त नं० ५

कहते हैं दो वैष्णवी ब्राह्मण किसी ग्राम में पहुंचे वह स्वयं पाकी थे। अर्थात् अपने हाथ से रसोई बनकर खाते थे परन्तु थे मूर्ख, उन्होंने एक सेठ के पास जाकर याचना की सेठ ने उन्हे खीर बनाने के लिए दूध, चावल और खांड देदी, रोटी के लिए आटा तथा सब्जी के लिए बढ़िया दाल और नमक दे दिया। यह सज्जन सामग्री तो ले आये परन्तु उसे बनाना नहीं जानते थे, उन्होने अपनी बेसमझी से दाल में खांड डालकर उसे उबालना शुरु कर दिया और दूध में सभी नमक डालकर उसे भी अग्नि पर रख दिया इस प्रकार यह दोनों चीजें बिगड़ गई चावल और आटे को कच्चा ही खाने लगे और बड़ियों को घिसकर आंखों में लगा लिया जिससे उनकी आंखें भी फूल गई, और पेट में भी बहुत दर्द होने लगा।

जिस प्रकार उन मूर्ख वैष्णवी ब्राह्मणों ने अपनी बेसमझी से सब काम बिगाड़ लिया. उसी प्रकार अति उत्तम मनुष्य शरीर को पाकर जो इसे उल्टे कामों अर्थात् संसार के विषय भोगों में लगा देता है उसका जन्म भी निष्फल जाता है। यथा—

सिता दाल मों दई दूध मों संहधवा दीनों।
दोऊ लिये बिगाड़ स्वाद बे स्वादह कीनों ॥१॥

चावल कच्चे खाये जड़ी घिस आंख लगाई ।
युगल नेत्र गये फूट दर्द बहु पेट में आई ॥२॥
नर देही को पाय चित्त जेहि विषयन में दीन ।
'हरिदास' मति हीन उस जन्म अकार्थ कीन ॥३॥

प्रिय बन्धुओं ! यदि विचार कर देखें तो मनुष्य शरीर में पशुओं की अपेक्षा सिवाय भजन करने के और विशेष भी क्या है ? मनुष्य शरीर में पशुओं के शरीर की अपेक्षा केवल यही विशेषता है कि हम इस शरीर में प्रभु का भजन कर सकते हैं, पशु नहीं कर सकते । बस यदि, हम इस शरीर में ईश्वर का भजन न करें तो फिर हमारे से गौ भैसा पशु ही श्रेष्ट हैं ।

'पशु मरे दस काज संवारे, नरु मरे नर काम न आये ।'

दोहा

पशु तन की पनहीयां बने, नर का कछू न होय ।
नर से नारायण बने, जे बन जाने कोय ॥

कवित्त

हाथी दान्तों के अनेक सुन्दर भूषण बनें,
चितरे की खाल राजा रानी को सुहाती है ।
पशुओं की खाल के अनेक जोड़े सुन्दर बनें,
शेरहुं की खाल योगीजनों मन भाती है ।
हिरनहुं के सारे अंग [illegible]ब के काम आवे,

बकरे की खाल मन पानी भर लाती है।
कहे कवि 'हरिदास' हरि के भजन बिन,
मानुष की खाल किसी काम न आती है।

दृष्टान्त नं० ६

कहते हैं-कोई एक सज्जन अपने मित्र को मिलने के लिए उसके घर पर गए जाने पर क्या देखते हैं कि उसका मित्र एक शीशे में जड़ी हुई अपनी फोटो को निकाल कर अपने पास खड़े एक कुत्ते की फोटो को उसमें जोड़ रहा है, इसे बड़ा आश्चर्य हुआ, और बोला भाई ! यह क्या करते हो। मित्र ने उत्तर दिया, यह कुत्ता मेरे से कई गुना अच्छा है, इसलिये अपनी फोटो निकालकर इसकी फोटो शीशे में धर रहा हूं। मित्र ने पूछा यह कैसे ? उसने जबाब दिया सुनो, मैं इस कुत्ते को दो रोटी दोपहर को और एक रोटी रात को देता हूं, इससे अधिक देने की मेरे में सामर्थ्य नहीं है, परन्तु यह फिर भी इस कदर संतोषी है कि यह जब भी मुझे देख लेता है खुशी में फूला नहीं समाता अपने हाव भाव से मेरा बहुत बहुत धन्यवाद करता है और रात दिन मेरे दरवाजे पर बैठा पहरा देता है।

आज ही रात की बात है कि मेरे घर में चोर आ घुसे मैं सो रहा था यह जागता था, जब इसे पता चला तो इसने झट भौंकना शुरु कर दिया, जिससे मेरी भी नींद

खुल गई, मुहल्ले वाले भी जाग उठे और चोर भाग गये। इस प्रकार मेरे घर की रक्षा हो गई, नहीं तो मैं आज लूट गया होता मैं इसका जन्म भर के लिए ऋणी हूं और देखो परमात्मा मुझे खाने पीने पहनने को सब कुछ देता है परन्तु मैं फिर भी उसका धन्यवाद नहीं करता कभी एक घन्टे के लिये भी बैठकर उसका भजन स्मरण नहीं किया। किन्तु यह मेरे द्वारा थोड़ा सा भोजन खाकर भी मेरे लिए अपने प्राणों तक की बाजी लगाने को हर समय हर घड़ी तैयार रहता है। इसलिये मैं अपनी फोटो निकाल कर इसकी फोटो शीशे में जोड़ रहा हूँ। इन बातों को सुनकर उसका मित्र बहुत प्रसन्न हुँआ।

इक अपराध पिता दा करिये ओह घर ते देत निकाली।
लख अपराध ईश्वर दा करिये कबहूं न रोजी टाली॥

बैंत पंजाबी

बे बन्दगी असां न मूल कीती।
बन्दे रब्ब दे मुफ्त कहाय चले॥
साथों पशु चंगे हैन जहान अन्दर।
घास खाये कर दूध पिलाय चल्ले॥
सारी उमर गुजरी कूड़े वन्ज करदे।
ओड़क कूड़ हो कूड़ कमाय चल्ले॥

'परमानन्द' कुछ एथे आ खटना सी ।
पल्ले वस्त सी ओह भी गवाय चल्ले ॥

अन्य

बन्दे नालों रुख चंगेरा उग पया बिन लाथो ।
ढीमां खाके फल खवावे फरक न करदा साथों ॥
लकड़ी इस दी सौकम आवे जेती है सिर पायों ।
मोयां जीवंदयां कहो बन्दे तू कहड़े कम्म आयों ॥

प्रिय वन्धुओं ! इस मनुष्य शरीर में केवल यही एक विशेषता है, कि इसमें ईश्वर का भजन हो सकता है । नहीं तो यह शरीर पशुओं से भी गया गुजरा है । महान अपवित्र और मलमूत्र का पुतला है पशु तो घास-फूस खाकर भी दूध देवेंगे, उनका मलमूत्र भी काम आवेगा, परन्तु यह हजरत इन्सान है कि मिठाई खाकर और दूध पीकर भी किसी के काम नहीं आता और इसके मलमूत्र से इतनी दुर्गन्ध आती है कि जब तक उसको उठा न लिया जावे तब तक समीप बैठना भी कठिन हो जाता है ।

यथा:-

सुन ओ यार पियारिया कन्न अकल दे खोल ।
झूठ न होसी जरा भी सच्च सुनावां बोल ॥१॥
हाड़ मांस का देह यह भरयो है मल मूत ।
बलगम थूक्कां पाक सब है कारज पञ्चभूत ॥२॥

थैला है यह गन्दगी दुर्गन्धी अस्थान ।
विष्टा ही इसमें भरा और न कुछ भी जान ॥३॥
बीरज रक्त मिलाप से बनती हैं यह देह ।
होय पवित्र किस तरह जिसका कारण यह ॥४॥
जैसे एक शरीर की कही अवस्था खोल ।
वैसे ही सब जान लो साथ अकल के तोल ॥५॥

दृष्टान्त नं० ७

एक राजा का पुत्र अपने मन्त्री की कन्या के रूप लावण्य को देखकर उस पर मोहित हो गया, यहां तक कि उसके विरह में उसने खाना पीना भी छोड़ दिया और कृष्ण होने लगा ।

अन्त में राजा के पूछने पर उसने सब वृतान्त कह दिया राजा ने उसकी बात को मन्त्री तक पहुंचाया और मंत्री ने यह बात अपनी स्त्री से कही, और स्त्री ने यह सब वार्ता पुत्री को कही, मन्त्री की कन्या बहुत बुद्धिमान थी, इस विपरीत सी बात को सुनकर उसके मन में कुछ भी दुख व आश्चर्य उत्पन्न नहीं हुआ क्योंकि वह जानती थी कि—

श्लोक

मनोहराणां च भोग्यानां युक्तीनां च वाससाम् ।
वितस्यापि सान्निध्याच्चलेच्चितं सतामपि ॥

अर्थ—सुन्दर मन के हरने वाले भोगों को देखकर सुन्दर स्त्रियों को देखकर और सुन्दर वस्त्रों तथा एकान्त पड़े हुए धन को देखकर श्रेष्ठ पुरुषों का मन भी चलायमान हो जाता है। फिर साधारण पुरुषों का कहना ही क्या है? (इसीलिए तो हमारे शास्त्रों में आया है कि पुरुष को अपनी युवा भगनि और युवा पुत्री के पास भी एकान्त में हरगिज न बैठना चाहिये क्योंकि मन के दूषित होते कोई देर नहीं लगती।)

खैर कन्या ने अपनी माता से कहा कि आप पिताजी के द्वारा राजकुमार को कहला भेजें कि वह बिल्कुल कोई चिन्ता न करें, आनन्द से खायें पीयें और मुझसे मिलने के लिये परसों रात्रि को मेरे महल में आ जाये, (कन्या ने माता से कह दिया कि मैं ऐसा उपाय करुंगी जिससे वह राजकुमार भी समझ जायेगा और मेरा धर्म भी सुरिक्षत रहेगा) मन्त्री ने जब यह बात राजकुमार से कही तो वह बहुत प्रसन्न हुआ और खाना पीना शुरु कर दिया।

इधर तीसरे दिन मंत्री की पुत्री ने अपने पिताजी से कहा कि आप १५ मिट्टी के कूंडे और १५ सुन्दर रेशमी रूमाल मंगवा दिजिये। मंत्री ने मंगवा दिये।

अब उस लड़की ने एक वैद्य से तीक्षण जुलाब की गोलियां मंगवा कर खा ली जिससे कुछ देर बाद उस वमन और

दस्त आने शुरु हो गये । वह उन्हीं कूंड़ों में वमन और दस्त करने लगी, जिस कूंड़े मे वमन या दस्त करती, उसका मुंह उसी समय रेशमी रूमाल से बांध देती इस प्रकार उसने सब कूड़ों को वमन दस्त तथा बलगम से भर दिया और उन पर रेशमी रुमाल बांधकर एक ओर रख दिये । उसका सारा दिन इसी बेहाली में गुजर गया न तो उसने कुछ खाया न स्नान किया मुँह का रंग बिल्कुल पीला पड़ गया, नेत्र अन्दर घुस गये, हाल बेहाल हो गया, ऐसे प्रतीत होता था जैसे कोई चूड़ेल बैठी हो ।

इधर रात होते ही राजकुमार भी सजधज के साथ आ गया परन्तु महल में आते ही दुर्गन्ध आने लगी, राजकुमार ने नाक पर रुमाल रखकर कहा मत्री जी ! यह बदबू कैसो आ रही है ? मंत्री ने कहा, कोई चीज होगी आपको इससे क्या ? आप इससे अगले कमरे पर चले जाये । राज कुमार जब वहां पहुंचा जहां वह बैठी थी तो दुर्गन्ध के मारे स्वांस लेना भी कठिन हो गया ।

कन्या के पोले रंग और उसके मूँह पर भिनभिनाती मक्खियों को देखकर बोला—प्यारी ! अभी परसों तो मैंने तुम्हें बड़े सुन्दर रुप में देखा था, आज क्या बात हो गई ।

कन्या ने हाथ जोड़कर कहा, राजकुमार ! यदि आपको मेरे से प्रेम है तो मैं जैसी कैसी भी हूँ आपके पास हूं और

यदि मेरी सुन्दरता से प्रेम है तो वह सामने कूंड़ों में रखी है, रुमाल उठाकर देख लीजिये, राजकुमार तो काम से अन्धा था ही क्योंकि कहा भी है—

'को वा महान्धो ? मदनातुरो यो'

महान अन्धा कौन है ? जो काम से व्याकुल है ।
कौवा अन्धा रात को उल्लू दिन में होय ॥
कामी अन्धा दिन रात अकल भी अपनी खोय ।

वह इस बात को समझ न सका झट कूंडों की ओर गया, एक दो कूंड़ों से रुमाल उठाने पर ही उसकी आंखें खुल गई और उसी समय परम वैराग्य उत्पन्न हो गया उस कन्या के चरणों में गिर कर अपनी भूल की क्षमा मांगी और उसे धर्म की बहिन समझने लगा।

श्लोक

अमेध्य पूर्णे क्रिमिराशि संकुले स्वभाव दुर्गन्धित मध्रुवे ।
कलेवरे मूत्र पुरीष भाजन रमन्ति मूढ़ा विरमंति पंडिता ।१।

स्वदेहाऽशुचि गन्धेन न विरज्येत यः पुमान् ।
वैराग्य कारणं तस्य किमन्यदुपदृश्यते ।२।
यदन्तस्य देहस्य वहि स्याच्च तदेवहि ।
दण्डग्रहा बारयेयुः शुनः काकांश्च मानवः ।३।
सर्वाशुचि निधानस्य कृतघ्नस्य विनाशिनः ।
शरीरस्य कृते मूढ़ाः सर्वे पापानि कुर्वते ।४

अर्थ—अपवित्र मलमूत्र से पूर्ण, क्रिमियों की राशि व्यापत, स्वभाव से दुर्गन्धि वाले, नाशवान और मलमूत्र भाजन रुप इस शरीर में मूढ़ ही प्रीति करते हैं, विद्वान पुरुष इससे वैराग्य को प्राप्त होते है ।१।

इस अपने अपवित्र और दुर्गन्धि वाले शरीर को देख कर भी जो पुरुष वैराग्य को प्राप्त नहीं होता, उसे इससे अधिक वैराग्य का कारण क्या दिखाया जाय ? ।२।

जो कुछ इस देह के अन्दर है, यदि विधाता उसको बाहर की ओर कर देता, तो सब लोग दिन भर हाथ में डण्डा लेकर कुत्तों और कौओं को ही हटाते रहते (क्योंकि नंगे मांस को देखकर कुत्तो और कौवे इसको खाने के लिये दौड़ते ।) ।३।

सम्पूर्ण अपिवत्रों को खानी, कृतघ्न तथा नाशी जो यह शरीर है । इसके वास्ते मूढ़ पुरुष सब पाप करते हैं (विचार नहीं करते ।) ।४।

कवित्त

जा शरीर माहि तू अनेक सुख मान रह्यो ।
ताहि तू विचार या में कौन बात भली है ।
मेध मज्जा मांस रग रग में रक्त भरयो ।
पेट हूँ पटारी जा मैं ठौर ठौर मली है ।
हाड़न सों भरया मुख हाड़न के नैन नाक ।

हाथ पांव सोऊ सब हाड़न की नली है।
'सुन्दर' कहत याहि देख जिन भूले कोऊ।
भीतर भंगार भरी ऊपर तो कली है।१।
गौरे गोरे रंग का गुमान कहां बांवरे।
रंग तो पतंग रंग छिन में उड़ जायगो।
कहत 'मूलक दास' जीवन को कौन आस।
मूये पाछे हाड़ मांस कूकरा ही खायगो।२।

— अन्य भी पंजाबी शब्दों में —

पंजतत दा पुतला कीना नाम चा रखया बन्दा।
कारीगर ने खेल रचाया ऊपर फेरियो रन्दा।१।
बाहर से सुन्दर बहु दोसे अंदर माल दियो भर गंदा।
बंदा बंदगी करे तां बन्दा नहीं गंद दा गन्दा।२।

आनन्द कन्द भगवान श्री कृष्ण चन्द जी ने भी गीता में उपदेश दिया है।

'अनित्यमसुखं लोंक मिमं प्राप्य भजस्व माम्'

भावार्थ:—इसलिये तूं सुख रहित और क्षणभंगुर इस मनुष्य शरीर को प्राप्त होकर निरन्तर मेरा ही भजन कर अर्थात् मनुष्य शरीर बड़ा दुर्लभ है, परन्तु है नाशवान और सुख रहित, अतः काल का भरोसा न करके तथा अज्ञान से सुख रूप भासने विषय भोगों में न फसकर निरन्तर मेरा ही भजन कर।

बैंत पंजाबी

जींम जन्म मनुष्य दा नाल किरपा ।
जेकर सज्जनों ओह करतार देवे ॥
तां फिर एह इन्सान नूं है वाजिब ।
ओहदी याद विच उमर गुजार देवे ॥
रखे बदी न किसे दी याद हरगिज ।
नेकी तांई न कदे विसार देवे ॥
बिगड़े अपना कम्म हजार भावे ।
एपर किसे दा कम्म संवार देवे ॥

—॥ हरि ओ३म् तत्सत् ॥—

राम नाम की महिमा

भजन

खामोश यूं बैठा है क्या ? श्री राम कह श्री राम कह ।
है नाम में अमृत भरा श्री राम कह श्री राम कह ।१।
कल्प द्रुम यह मन्त्र है हर कामना का जन्त्र हैं ।
जो चाहेगा मिल जायगा श्री राम कह श्री राम कह।२।
दुनियां है माया जाल यह और ज्ञान का जंजाल यह ।
होना है गर इससे रिहा श्री राम कह श्री राम कह ।३।
रह रह के तू पछतायेगा जिस दिन यहाँ से जायेगा ।
बस नाम ही काम आयेगा श्री राम कह श्री राम कह ।४।
बह राम जो सब में रमा वह राम जो घट घट बसा ।
तूं भी वही हो जायेगा श्री राम कह श्री राम कह ।५।

जन्मांतर सहस्त्रेषु तपो योग समाधिभिः ।
जनांना क्षीरण पापनां कृष्ण भक्तिः प्रजायते ।१।

अर्थात्-पूर्व के हजारों जन्मों में किये गये तप योग और समाधि द्वारा जिन पुरुषों के पाप क्षीरण हो गये हैं, उनके अन्तःकरण में ही इस जन्म में कृष्ण भक्ति उत्पन्न होती है

श्लोक

जिह्वा लब्ध्वाऽपि यः कृष्णं कीर्तनीयं न कीर्तयेत् :
लब्ध्वाऽपि मोक्ष-निः श्रेणि सहारूह्यति दुर्मति ॥

अर्थ–इस मनुष्य जिह्वा को पाकर भी कीर्तन करने योग्य जो भगवान राम अथवा कृष्ण हैं जो उनका कीर्तन नहीं करता वह दुर्मति पुरुष मानों मोक्ष धाम तक पहुंचा देने वाली सीढ़ी को प्राप्त होकर भी उस पर नहीं चढ़ता।

परन्तु जो प्रभु के प्यारे है वह निरन्तर ही इस जिह्वा भगवान का भजन करते हैं और कह' है।

तेरा नाम जपने को बांके बिहारी।
जबां वन गई क्यों न यह देह सारी १।

जपुजी साहिब

इकदू जीभौ लख होहि लख होवहि लख बीस।
लख-लख गेड़ा आखीअहि एक नाम जगदीश॥
एतु राव पत पवड़ीआ चड़िए होई इकीस।
सुन गल्लां आकास की कीटा आई रीस॥
नानक नदरी पाईऐ कड़ी कूड़े ठीस॥३२॥
भरीऐ हथ गैर तन देह पानी धोते उतरस खेह।
मूत पलीती कप्पड होय दे साबूण लईऐ ओह धोय।
भरीऐ मत पापां कै संग ओह धोवै नावै के रंग॥

श्लोक

दासोऽहमिति या बुद्धिः पूर्वमासीज्जनार्दने ।
दाकारोऽपहृतस्तेन गोपी चोरापहारिणा ॥

भावार्थ यह है कि-प्रभु का भक्त जब अनन्यचित्त से चिरकाल पर्यन्त ध्यान में स्थित होकर दासोऽहं २ मैं आप का दास हूँ मैं आपका दास हूं इस प्रकार की रट लगाता रहता है । तब गोपियों के वस्त्रों को चुराने वाले भगवान चुपके चुपके भक्त के अन्त करण में प्रवेश करके अक्षर दा को चुरा लेते हैं । शेष सोऽहं रह जाता है, तब वह भक्त सोऽहं सोऽहं जो तू है सो मैं हूं की रट लगाता हुआ उन्हीं का रूप बन जाता है ।

दोहा

तूं तूं करता तूं भया मुझ में रहा न हूं ।
वारी तेरे नाम पर जित देखूं तित तूं ॥

श्लोक

हरिर्हरति पापानि दुष्टचितैरपि स्मृतः ।
अनिच्छन्नपि संस्पृष्टो दहत्येव हि पावकः ॥

अर्थ-'हरति पापानि इति हरि' जो पापों का हरन करे उसे हरि कहते है। इस व्युत्पत्ति के अनुसार दुष्टचित्त पुरुष द्वारा भी हरि का स्मरण उसके पापों को इस प्रकार नष्ट कर देता है जैसे कि न चाहते हुए भी यदि कोई पुरुष अग्नि का स्पर्श कर लेता है तो वह उसे भी जला देती है ।

प्रिय बन्धुओं ! सम्पूर्ण वेद, शास्त्र पुराण, स्मृति, इतिहास और महात्माजन बारम्बार इस बात की साक्षी देते हैं कि निरन्तर भगवान का नाम जप करने से इस जीव के सम्पूर्ण पापों का नाश हो जाता है। माता पिता अपनी संतान को कभी विपरीत अथवा असत् शिक्षा नहीं देते। वेद शास्त्र पुराण, स्मृति, इतिहास और महात्माजन हमारे लिये माता पिता के समान हितकारी हैं फिर वह हमें झूठ बात क्योंकर कह सकते हैं। हां ! यदि उनकी बताई हुई बात का हमें वैसा फल नहीं मिलता तो यह हमारे साधन की कमी है उनका कुछ दोष नहीं। यदि हम किसी योग्य वैद्य से औषधि लेकर उसका पथ्य पूर्वक सेवन नहीं करते रहते, बल्कि औषधि सेवन करने के साथ साथ अपनी मनमानी भी करते रहते हैं तो फिर यदि हमारा रोग दूर नहीं होता तो इसमें हमारा अपना ही दोष है, वैद्य का नहीं।

दृष्टान्त नं० ८

कहते हैं ! एक सज्जन की गौ बीमार हो गई वह उसे डाक्टर के पास ले गया, डाक्टर ने गौ को देखकर कहा कि इसी के दूध से निकले हुए आधा पाव मक्खन में १ छटांक पिसी हुई काली मिर्च मिलाकर प्रातः सायं दोनों समय ३ दिन खिलाओ यह आरोग्य हो जायेगी। यह सज्जन 'सत वचन कहकर गौ को घर ले आये और सोचने लगे हमारी

गौ दोनों समय में जितना दूध देती हैं। उससे पाव भर ही माखन निकलता है। इसलिये दूध दोहने व माखन निकालने का व्यर्थ परिश्रम क्यो करें। इस पाव भर माखन को तीन दिन के लिये गौ के अन्दर ही रहने दें और कालीमिर्च पीस कर दोनों समय खिला दिया करें और ऐसे विचारकर उसने आज दूध को नहीं दूआ और दोनों समय एक-२ छटांक काली मिर्च पीस कर गौ को किसी तरह से खिला दी।

अगले दिन गौ की हालत पहलेसे भी खराब थी, परन्तु उसने सोचा कि कोई बात नहीं डाक्टर ने तीन दिन दवाई करने को कहा है। अत: दो दिन और भी करके देखते हैं, क्योंकि आज भी उसने वैसा ही किया।

तीसरे दिन प्रात:काल जब गौ को जाकर देखा तो वह मर चुकी थी। यह सज्जन दौड़े-२ डाक्टर के पास गये और बोले—डाक्टर साहब! आपने यह कैसी दवा बताई जो दो दिनों में ही मेरी गौ मर गई।

डाक्टर ने कहा—उसे कालीमिर्च किस रीति से खिलाते रहे? यह सज्जन बोले-महाराज! हमने सोचा दोनो वक्तमें गौ जितना दूध देती है, उससे पावभर ही माखन निकलता है इसलिए व्यर्थ दूध दुहने और माखन निकालने का परिश्रम ही क्यों किया जाए? महाराज! मैंने दो दिन दूध दुहा ही नहीं इस तरह माखन गौके भीतर ही रहने दिया और काली

मिर्च दोनों समय बराबर पीसकर खिलाता रहा, परन्तु उसे कुछ भी आराम न हुआ और वह आज तड़के मर गई।

डाक्टर साहब बोले–भले आदमी! जब तूने मेरे कहे अनुसार दवाई का सेवन नहीं किया। अपनी मन–मर्जी ही करता रहा, फिर यदि गौ मर गई, तो इसमें मेरा क्या दोष है? तब यह सज्जन लज्जित होकर अपने घर चले आये।

दृष्टान्त

ऐसे ही यदि हम 'सर्व दु:खका औषध नाम' इस गुरू वाक्य अनुसार सब दु:खों को हरने वाली राम नाम रूपी महान औषधि खाकर भी सुखी नहीं होते हमारे दु:ख वैसे के वैसे ही बने रहते रहते हैं, हमें कुछ भी शान्ति नहों मिल तो इसमें गुरुजनो का क्यो दोष है! यह सब ही हमारी अपनी मनमानी का फल है।

यदि हम औषधि तो रत्ती भर खायें और कुपथ्य पाव भर करें, फिर यह दोष निकालें कि हमें औषधि ने लाभ नहीं किया तो यह हमारी भूल है।

इस तरह यदि बड़ी कठिनता से न चाहते हुये मन द्वारा पन्द्रह मिनट तो राम-२ करें और बाकी तमाम दिन चोरी, जारी, झूठ निन्दा, चुगली- ईष्या, बखीलो में गुजारें और यह दोष भी निकालें कि अभी तक भगवान के दर्शन क्यों नहीं हुए? तो यह हमारी भूल है?

दोहा—अहरन की चोरी करे, करे सुई का दान ।
कोठे चढ़ के देखदी, आवन कदो विवान ॥१॥
माला तो करमें फिरे और जिह्वा मुख मांहि ।
मनुआ तो चहुंदिश फिरे यह तो सिमरन नांहि ॥२॥

शेयर

न ता हो दूर बदअमलो, इबादत क्या बनती है ।
पड़ा मुर्दार कुयें में करे क्या साफ पानी को ॥१॥
रात को खूब सो-पीकर सुबहको तोबा करली ।
रिन्द के रिन्द रहे हाथ से जन्नत न गयी ॥२॥

परन्तु यदि निरन्तर संयम पूर्वक राम नाम रूपी दवा का सेवन किया जाये तो कुछ भी सन्देह नहीं कि हमारे सर्व प्रकार के दुःखों का नाश होकर हमे वांछित फल की प्राप्ति हो सकती है । राम नाम की शक्ति से तो समुद्र में पत्थर भी तैर जाते हैं ।

इतिहास

श्री राम बैठे समुद्र किनारे ।
हनुमान, अंगद व नल-नील सारे ॥१॥
तो खुश हो के भगवान उनसे पुकारे ।
मुझे एक से एक हो बढ़ कर प्यारे ॥२॥
हर एक बात में हर तरह ताक हो तुम ।
बहादुर हो लायक और पाक हो तुम ॥३॥

तराये जो पत्थर तो हैरान हूं मैं ।
यह पुल देखकर आज कुर्बान हूं मैं ।४।

अभी तक न समझा यह विज्ञान हूं मैं ।
ऐ नल, नील ! सच्च है परेशान हूँ मैं ।५।

बड़े पत्थरों को यह कैसे धरा है ।
यह पुल क्या बना ! एक जादू भरा है ।६।

बोले यूं नल-नील कहां हममें ताकत ।
तरायें जो पत्थर कहां यह ल्याकत ।७।

यह सब आपके नाम की है सदाकत ।
हम बन्दोंमें तो है फकत इक हमाकत ।८।

जो सच्च पूछिये तो कृपा राम की है ।
यह सारी सिफत आपके नाम की है ।९।

यह सुनते ही फेंका प्रभुने ने भी पत्थर ।
गया डूब पानी में ठहरा न पलभर ।१०।

तो बोले प्रभु 'गङ्गाधर' मुस्करा कर ।
कहते हो तुम झूठ क्यों यह सरासर ।११।

अगर मेरी ताकत से पुल ठहरा होता ।
तो छोटा सा पत्थरभी यह तैरा होता ।१२।

बोले यूं नल नील, स्वामी से हंस कर ।
जिसे आप फेंको वह डूबेगा यक्सर ।१३।

जिसे आप तारो वह जायेगा तर ।

समुद्र क्या ! तर जाये संसार सागर ।१४।
यह पत्थर न सकते थे हरगिज भी तर ।
लिखा आपका नाम होता न गर ।१५।

दोहा

राम नाम को समझ कर, गुजरी उतरी पार ।
व्यास कथा बांचत रहे, रहे उरार उरार ॥१॥

दृष्टान्त नं० १

कहते हैं गोकुल में एक ग्वालिन रहती थी, वह नित्य प्रति दूध बेचने के लिये नाव में सवार होकर यमुना पार जाया करती थी। वहां किसी मन्दिर में एक पण्डित जी रामायण की कथा किया करते थे। यह ग्वालिन भी अवकाश पाकर कभी-२ वहां चली जाया करती थी। एक दिन जबकि यह वहां बैठी कथा सुन रही थी तब राम नाम की महिमा का वर्णन करते हुए पंडितजी ने कहा—कि राम नामरूपी एक बड़ी नौका है जो पुरुष श्रद्धा भक्तियुक्त इसका आश्रय करता है वह अनायास ही संसार के समुद्र से पार हो जाता है।

श्लोक

अपार संसार समुद्र मध्ये सम्मज्जतो में शरणं किमस्ति ।
गुरु कृपालो! कृपया वदैत द्विश्वेश पादांबुज दीर्घ नौका ॥१॥

अर्थ—शिष्य प्रश्न करता है हे दयामय गुरूदेव ! कृपा कर यह बताईये कि अपार संसार रूपी समुद्र में मुझे डूबते हुये का आश्रय क्या है ? तब गुरुदेव उत्तर देते हुये कहते हैं कि विश्वपति परमात्मा का चरण कमल रूपी जहाज ही तेरा परमाश्रय है, जिससे तू अनायास ही संसार सागर से पार हो सकता है।

श्री मद्भागवत गीतामें भी भगवान ने कथन किया है—

तेषांमहं समुद्धर्ता मृत्यु संसार सागरात् ।
भवामि नचिरात्पार्थ मय्यावेशित चेतसाम् ॥१२.७

अर्थ—हे अर्जुन ! उन मेरे में चित्त को लगाने वाले प्रेमी भक्तों का मैं शीघ्र ही मृत्यु रूप संसार समुद्रसे उद्धार करने वाला होता हूँ। पण्डितजी के मुखसे इस प्रकार राम नाम की महिमा को सुनकर उस ग्वालिन ने मन में विचार किया कि मुझे दो आने प्रतिदिन नाव का किराया देना पड़ता है, क्या ही अच्छा हो यदि मैं राम नाम को सिद्ध करलूं तब इस प्रतिदिन के खर्च से तौ बच जाऊंगी, जब राम का नाम संसार समुद्र से पार कर देता है तो क्या इस यमुना से पार न कर दिया करेगा।

कथा समाप्त होने पर गुजरी ने एकान्त में पण्डितजी से प्रार्थना करते हुये कहा कि महाराज ! आप मुझे राम नाम का उपदेश और उसके जप की विधि आदि सब कुछ

बता दीजिए जिससे कि मुझे रामनाम की सिद्धि हो जाये। पण्डित जी ने उसे राम नाम का उपदेश दिया और बोले यदि तू ६ माह तक लगातार निरन्तर मेरी बताई हुई विधि अनुसार जप करती रहेगी, तो अवश्य तेरी मनोवांछा पूर्ण होगी।

पण्डित जी से राम नाम का उपदेश लेकर गुजरी को बड़ी प्रसन्नता हुई और वह घर आकर विधिपूर्वक एक चित्त से रामके नामका जप करने लगी। छः मास बीत जाने पर भगवानने उसे स्वप्न में दर्शन दिये और कहा कि तेरा नाम नाम मन्त्र सिद्ध हुआ। अब तू निशङ्क होकर यमुना के आर-पार चली जाया करेगी, और भी जो काम तू करना चाहेगी वह इस राम नाम मन्त्र से सिद्ध होगा।

इतना कहकर भगवान लोप हो गये और गुजरी की नींद खुल गई, अब उसकी खुशी का कोई ठिकाना न था, वह अपने काम में फूली न समाती।

गृह कार्य से निवृत्त होकर प्रतिदिन की तरह आज भी वह दूध बेचने के लिये यमुना पार को चली। परन्तु जब यमुना के तट पर आई तो किसी नाव का आश्रय न लेकर उसने राम-२ कहा और यमुना जल में, स्थल की न्याई चलना प्रारम्भ किया। वह जलके ऊपर इस तरह चली जा रही थी, जैसे कमलका फूल वह जलमें चलती हुई कुशलता

पूर्वक दूसरी ओर जा पहुंची और दूध बेचने के पश्चात् उसी तरह राम नाम कह कर यमुना के इस ओर भी आगई और प्रति दिन ऐसे ही जाने लगी।

एक दिन उसके मन में विचार उत्पन्न हुआ कि जिस पण्डित जी कृपा से मुझे राम नाम की सिद्धि हुई है धन्यवाद की रीति से उन्हे एक दिन अपने घर बुला कर भोजन तो खिलाऊ। ऐसा विचार करके आज वह मन्दिर में पण्डित जी के पास पहुंची और कथा समाप्त हो जाने पर नमस्कार करके बोली—भगवन! आज कृपा करके आप मेरे घर भोजन पावें।

गुजरी के एक-दो बार कहने पर पण्डित जी ने स्वीकार कर लिया और वह इन्हें साथ लेकर यमुना के तटपर पहुंचे और पण्डितजीसे बोल -महाराज ! राम-२ कहकर मेरे साथ जल में चले आईये। पण्डित जी बोले-अरी पगली ! यह कैसे हो सकता है ? नौका के बिना सिर्फ राम-२ कह कर नदी के पार जाना असम्भव है।

ग्वालिन ने कहा-महाराज ! आपने ही तो कथामें कहा था-कि राम नाम नौका की न्याई है ? पण्डित जी बोले-पगली ! मैंने जन्म मरण रूपी संसार सागर से तरने के लिये राम नाम की नौका को न्याई कहा था न कि यमुना नदी पार करने के लिये।

ग्वालिन बोली—जो राम नाम संसार सागर से पारकर सकता है क्या वह इस यमुना नदी से पार करने में सामर्थ्य नहीं है ? महाराज ! मुझे आपने जो उपदेश दिया था उसका विधिपूर्वक अनुष्टान करने से मुझे इस सिद्धि की प्राप्ति हुई है कि मैं अब राम-२ का उच्चारण करके इस नदी के आर पार चली जाती हूं। आप राम-२ कह कर चले आईये। पंडितजी ने राम-राम कह कर नदीमें चरण रखा कि डूबने लगे तब गुजरी ने प्रार्थना की कि हे राम ! पण्डित जी को भी यमुना पार कर दीजिए।

ऐसे कहकर उसने राम—राम उच्चारण किया और पण्डित जी का हाथ पकड़ कर बोली—महाराज ! मेरे साथ निशंक होकर चले आईये।

अब की बार यमुना जल ने पण्डित जी को उसी तरह अपने ऊपर उठा लिया जैसे गुजरी को और दोनों जल के ऊपर चलते हुए सुख पूर्वक नदी के पार हो गये। घर ले जाकर ग्वालिनने आदर पूर्वक पण्डितजी को खाना खिलाया इनका धन्यवाद किया और फिर उसी तरह से यमुना नदी से पार कर दिया। गुजरी की इस तरह राम की सिद्धि को देखकर पण्डित जी मन ही मन बहुत लज्जित हुए और कहने लगे। अहो ! आश्चर्य है कि हमारे से राम नाम को ग्रहण करके गुजरी तो पार हो गई और हमारी सारी आयु

रामायण की कथा करते व्यतीत हो गई, परन्तु हम उरार के उरार ही रहे।

दोहा

राम नाम को समझकर, गुजरो उतरी पार।
व्यास कथा बांचत रहे, रहे उरार उरार ॥१॥

श्री कबीर दास जी वचन है :—

गाया तिन पाया नहीं, अनगाय ते दूर।
जिन गाया विश्वास गहि, तिनके सदा हजूर ॥२॥

दृष्टान्त नं० ११

गोस्वामी तुलसीदास जी के पास एक भक्त आया और बोला—महाराज! मैं तैरना नहीं जानता और न कोई मल्लाह है, यमुना नदी के पार कैसे जाऊं।

गोस्वामी जी बोले—अपने राम का स्मरण करके पार उतर जाओ। भक्त ने राम-२ का उच्चारण करके जल में पैर रखा कि डूबने लगा, तब फिर आकर बोला—महाराज राम-२ से तो कुछ नहीं हुआ, डूबता हूँ।

तब गोस्वामीजी बोले—जाकर कहो कि हे तुलसीराम! मुझे यमुना पार करदें। तब उसने ऐसे जाकर कहा और सुख पूर्वक यमुना पार हो गया।

दृष्टान्त नं० १०

सन्त आवने देखकर, सती निवायो सीस।
रहो सुहागन जगत में तुलसी दई आसीस ॥१॥

कहते हैं कि एक पतिव्रता स्त्री का पति मर गया, लोग उसकी अर्थी को उठाए आगे-२ जा रहे थे और वह पीछे-पीछे स्त्रियों के साथ रोती पीटती आ रही थी, कि थोड़ी दूरी पर उसने गोस्वामी तुलसी दास जी को जाते देखा। तब दिल में विचार किया कि महात्मा को नमस्कार अवश्य करना चाहिए। क्योंकि :—

'वृथा न साधु मिलापः'

महात्माओं का मिलाप कभी व्यर्थ नहीं जाता, ऐसा विचार कर उस सतीने स्त्रियों के समूह से निकलकर गो-स्वामी तुलसी दास के चरणों में जाकर नमस्कार की, तब गोस्वामी जो ने आशीर्वाद देते हुए बोले-देवी ! 'सुहागवती भव' इस पर वह देवी रोती हुई बोली-महाराज ! अब मैं सुहागवती कहां रही ? मेरे पति को तो चिता में जलाने जा रहे हैं। गोस्वामी जी बोले-देवी ! तू चिन्ता न कर, यह वर भी तुझे मेरे अन्दर बैठे हुए भगवान ने ही दिया है, जो सर्व शक्तिमान हैं। इसलिये यह वर कभी मिथ्या नहीं हो सकता।

गोस्वामी तुलसी दास जी उस देवी के साथ उस अर्थी के पास गये और उसके मुर्दा पति के शरीर पर राम राम कह कर जल का छींटा देते हुए बोले 'चिरजीवी भव' यह कहने की देर थी कि उसका पति राम-२ कहता हुआ उठा बैठा। इस प्रकार उसे जीवित सबने देखकर गोस्वामी जी को बारम्बार धन्यवाद करते हुए अपने घर को लौट आये इसीलिये कहा है :—

निगाहें मरदे आरफ से, बदल जाती हैं तकदीरें।
अगर विश्वास सच्चा हो तो कट जाती हैं जंजीरें॥
कज़ा को रोक लेती है दुआ, रौशन जमीरों की।
भला मन्जूर है अपना तो, कर खातर फकीरों की॥

प्रिय सज्जनों! यह अपने-२राम नाम को शक्ति कहने में तो राम नाम एक ही है परन्तु जो आपके राम नाम में शक्ति है। वह मेरे में नहीं और जो मेरे राम नाम में शक्ति है वह दूसरे राम में नहीं, जैसे कि दस गिलासों में समान ही जल रखा गया हो, परन्तु चीनी भिन्न-२ मिकदार से डाली गई हो, हर एक गिलास का जल उसी मिकदार से मीठा होगा जिस मिकदार से उसमें चीनी डाली गई है।

इसी प्रकार यद्यपि राम-नाम तो एक ही है परन्तु उस को जिसने जिस कदर अधिक संयम पूर्वक साधा है, उसके

राम नाम में उसी कदर अधिक शक्ति होती है यही कारण है कि जब कोई रोगी किसी औषधिसे भी निरोग नहीं होता तो लोग उसे महात्माओं के पास ले जाते हैं और महात्मा अपने मुखरविन्द से 'राम तुझे राजी करे' इतना कह कर ही उसे हाथ के स्पर्शमात्र से राजी कर देते हैं। यह उनकी सिद्ध किये हुये अपने रामनाम की शक्ति हैं जो आपके और मेरे राम नाम में यहीं है। काले अर्वक की भस्म बाजार में दो आने तोला से २० रुपये तोला तक बिकती है। देखने में तो सब भस्में एक सी हैं। किन्तु जिस भस्म को जितनी अधिक भावनायें दी गई हों वह उतनी ही अधिक गुणकारी और कीमती होती हैं।

दृष्टान्त नं० १२

महापुरुषों के मुख से ऐसे सुना जाता है कि महाराजा पटियाला के पास 'पण्डित दिला राम' नामके राजवैद्य रहते थे। एक दिन महाराजा को ज्वर हो गया उस समय पण्डित दिलारामजी अपने घर गये हुये थे। महाराजा ने मन्त्री से कहा—कि पण्डित जी को बुला लाओ।

मन्त्रीने घर जाकर पंडितजी को कहा कि महाराजाको ज्वर हो गया हैं, अतः आपको शीघ्र बुलाया है। पन्डितजी उस समय पूजा-पाठ कर रहे थे। इसलिए बोले-कि मैं इस

समय पूजा--पाठ में हूं उसे पूर्ण किये बिना नहीं आ सकता इसलिये आप दवाई की एक पुड़िया ले जायें और महाराजा साहबको को ताजे जलसे खिलादें उनका ज्वर उतर जायेगा

मन्त्री ने पुड़िया ले ली और महाराज के पास आकर बोला–महाराजा साहब ! दिलाराम वैद्य को बड़ा घमण्ड हो गया है। वह कहता है कि मैं इस समय पूजा-पाठमें लगा हुआ हूं आ नहीं सकता। यह एक पुड़िया उन्होंने दी है कि ताजे जल से उनको खिला देना, देखिये महाराज ! आपके शरीरको तो इतना कष्ट हो रहा है और उन्हें पूजा–पाठसे फुरसत नहीं। भला ऐसे वैद्यें को पास रखने से आपको क्या लाभ हो सकता है ?

महाराजाने पुड़िया लेकर अलमारीमें रखदी, खाई नहीं और मंत्री से बोले उन्हें जाकर कहो—हमारी रियासत से बाहर हो जायें, हमें उनकी जरूरत नहीं है।

महाराजा की यह आज्ञा जब पण्डित जी को मिली तो उन्होंने झट अपना आसन उठाया और दूसरी रियासत में जाकर आनन्द के रहने लगे। क्योंकि:—

'गुणी सर्वत्र पूज्यते' गुणी पुरुष की सब जगह पूजा होती है।

अब महाराजा साहब ने अन्य वैद्य--डाक्टरो से इलाज करवाना शुरु किया, परन्तु किसी से भी कुछ लाभ न हुआ

इसी तरह से दु:ख पाते महाराजा को छः महीने हो गये। एक दिन उन्हें ख्याल आया कि पंडित दिला राम ने एक पुड़िया दवाईकी भेजी थी, उसे ही खाकर देखना चाहिये। उन्होंने अलमारी से पुड़िया निकाली और ताजे जल के साथ खायी। दवाई खाने के दो घण्टे पश्चात् उनका ज्वर उतर गया और वह बिल्कुल निरोग हो गये। तब तो महाराजा साहबने पण्डित दिलारामजी को बुलाकर उनसे क्षमा मांगी और उन्हें पुन: अपने पास रख लिया।

सुना जाता है कि फिर महाराजा को जीवन भर ज्वर नहो हुआ, वह दवाई काले अबरक को ही एक पुड़िया थी जिसने छ: महीने के ज्वर को दो घण्टेमें दूर कर दिया और फिर जीवन भर न होने पाया।

जिस प्रकार स्याह अबरक की भस्में देखने मैं तो सब एक सी हैं। परन्तु जिस भस्म को जितनी अधिक भावना दी जाती हैं, वह भस्म उतनी ही अधिक गुणकारी और कीमती हो जाती हैं। इसी प्रकार राम नाम देखने में तो एक ही हैं, परन्तु जिसने जितना अधिक संयम पूर्वक उसको साधा है उसके राम नाम में उतनो ही अधिक शक्ति होती है।

दृष्टान्त नं० १३

कहते हैं—बीकानेर के राजा को कुष्ठ हो गया। बहुत

चिकित्सा की गईं परन्तु कुछ लाभ न हुआ और कुष्ट बढ़ता ही गया। अन्त में राजा ने जीते जी काशी में जाकर शरीर त्यागने का निश्चय कर लिया। वह अपने सब अमीरो और सम्बन्धियों को साथ लेकर कल्वतर लेने के लिये काशी में आ पहुंचा। आगे-२ राजा जा रहा था और पीछे-पीछे सैकड़ों लोग राम का कीर्तन आ रहे थे।

उस समय भक्त कबीरदास जी कहीं बाहर गये हुये थे और उनके पुत्र श्री भक्त 'कमाल' जी घर में थे। उन्होंने जब यह शब्द सुना, तो देखने के लिये बाजार में आ गये, पता चला कि बीकानेर का राजा कुष्ट के रोग से दुःखी हो कर कल्वतर लेने के लिये काशी में आया है।

भक्त कमाल जी के चित्त में दया आई और वे उन्हें अपने घर ले आये और तीन बार राम नाम का उच्चारण करके गंगाजल का छींटा दिया कि राजा का कुष्ट दूर हो गया। वह भक्त कमाल जी के चरणों में गिरा और सब अमीरों वजीरों सहित धन्यवाद करता अपने घरको वापिस लौट गया।

राजा के चले जाने के पश्चात् भक्त कमाल जी मनमें विचार करने लगे—मेरे राम नाम में कितनी शक्ति है, जो केवल तीन बार के उच्चारण से राजा का कुष्ट दूर हो गया

और दूसरे सैकड़ों लोगों के हजारो बार राम नाम का कीर्तन करने से भी दूर न हुआ।

इस प्रकार वह मन में फूले न समाते थे और सोचते थे कि कब पिता जी आवें, और कब मैं उन्हें अपने राम नाम की महिमा सुनाऊं।

अन्त में जब कबीर जी घर आये तो कमाल जी ने राजा के कुष्ट दूर करने की सब बात बिना पूछे ही बड़े उत्साह पूर्वक कह सुनाई।

कबीर साहिब ने सिर हिलाया, और नीचे मुख करके मन ही मन में विचार करने लगे। मेरे पुत्र कमाल को व्यर्थ हो अभिमान हो गया है। तीन बार राम नाम के उच्चारण से यदि इसने एक राजा के कुष्ट को दूर किया, तो इसमें कौन सी बढ़ाई की बात है? मालूम होता है कि यह अभी राम नाम की महिमा को समझा ही नहीं इसलिये एक पत्र लिखा और बोले—बेटा! इसे भक्त तुलसीदास के पास ले जाओ।

भक्त कमाल जी उस पत्र को लेकर भक्त तुलसीदास जी के पास पहुंचे, और नमस्कार करके वह पत्र उनके हाथों में दे दिया। भक्त तुलसीदास जी ने जब उसे खोल कर पढ़ा तो इसमें लिखा था—

दोहा

डूबा वंश कबीर का उपज्यो पूत कमाल ।
तीन बार जिस राम कहि कुष्टि कियो बहाल ॥१॥

अर्थ—कबीर जी लिखते है कि मेरा वंश तो डूब गया जिसमें कमाल जैसा नालायक पुत्र पैदा हुआ । जिसने तीन बार रामनाम का उच्चारण करके सिर्फ एक रोगी के कुष्ट को दूर किया, क्या एक ही बार राम नाम का उच्चारण करना पर्याप्त नहीं था ।

भक्त तुलसीदास जी समझ गये कि राम नाम की अधिक से महत्ता जानने के लिए कबीर जी ने कमाल को मेरे पास भेजा है । इसलिए प्रेमपूर्वक इसको अपने पास ठहरा लिया और यथोचित आदर सत्कार भी किया । उसी दिन सांयकाल को भक्त तुलसीदास जी ने सब नगर में और नगर से बाहर डोंडी पिटवा दी कि जिस किसी को भी कुष्ठ का रोग हो वह अमुक दिन तक हमारे पास पहुंच जाये, हम बिना औषधि के उसके रोग को दूर कर देंगे ।

नियत दिन आने पर लगभग एक हजार कुष्टी उनके पास एकत्रित हो गए, भक्त तुलसीदास जी ने उनके दो भाग किये और बोले पांच सौ को आज निरोग करते हैं । और पांच सौ को कल करेंगे । ऐसा कहकर भक्त जी ने एक बार

राम नाम का उच्चारण करके गङ्गाजल का छींटा उन पर दिया जिससे कि वह सबके सब कुष्ट रहित होके तुलसीदास जी का धन्यवाद करते हुये अपने अपने घरों को चले गये। इसी प्रकार दूसरे पांच सौ कुष्टियों को दूसरे दिन एक बार राम नाम कहकर गङ्गाजल का छींटा देकर निरोग कर दिया, और वह भी धन्यवाद करते हुए अपने२ घर पहुँचे।

पांच सौ कुष्टियों को केवल एक बार राम नाम के उच्चारण से भक्त तुलसीदास जी ने निरोग कर दिया, यह वार्ता देखकर भक्त कमाल जी का सारामद जाता रहा और वह मन ही मन में बहुत लज्जित हुए कि अभी मेरे राम नाम में तो कुछ भी शक्ति नहीं है।

इस प्रकार रामनाम की महिमा को जानकर भक्त कमाल जी, श्री भक्त तुलसीदास जी को बारम्बार प्रणाम करते हुए अपने घर को चले और सब वार्ता ज्यों की त्यों अपने पिताजी को सुनाई। इसे सुनकर भी भक्त कबीर जी ने अपना सिर हिलाया और मुख को नीचे कर लिया, ऐसा करने से उनका भाव यह था कि क्या एक बार रामनाम का उच्चारण एक हजार कुष्टियों को निरोग करने में सामर्थ्य न था? जो भक्त तुलसीदास को उनके दो भाग करने जरुरत पड़ी। मालूम होता है कि राम नाम की महत्ता को अभी वह भी ठीक नहीं समझ पाये। ऐसा विचार कर

भक्त कबीर जी ने एक और पत्र लिखा और अपने बेटे कमाल को देकर बोले ! इस पत्र को भक्त सूरदास के पास ले जाओ ।

भक्त कमाल जी उस पत्र को लेकर भक्त सूरदास जी के पास पहुंचे और नमस्कार करके पिता जी का पत्र उनको दिया भक्त सूरदास जी बोले—मैं नेत्रहीन हूं, पत्र पढ़ नहीं सकता, इसलिये तुम ही पड़कर सुनाओ कि इस पत्र में तुम्हारे पिता जी ने क्या लिखा है । भक्त कमाल जी ने जब उस पत्र को खोला तो लिखा था ।

दोहा

पांच सौ कुष्टि राम, कहि, तुलसी किये बहाल ।
कौड़ी के बदले बिका, राम अमोलक लाल ॥२॥

भक्त सूरदास जी समझ गये कि राम की अधिकाधिक महत्ता जानने के लिये कबीर जी ने अपने पुत्र कमाल को मेरे पास भेजा है । इसलिए बोले—बेटा ! दो मील की दूरी पर गंगा जी में एक मुर्दा बहता आ रहा है तुम घाट पर चले जाओ और जब वह तुम्हारे पास आवे तो उसे निकाल कर मेरे पास ले आना । कमाल जी मन ही मन में आश्चर्य को प्राप्त हुए कि अभी तो कह रहे थे कि मुझे

नजर कुछ नहीं आता और अभी कह रहें हैं कि दो मील की दूरी पर एक मुर्दा बहता आ रहा है उसे पकड़ लाओ। अस्तु भक्त कमाल जो गंगा जी के घाट पर जा पहुंचे और ऊंची जगह पर खड़े होकर देखने लगे। थोड़ी देर बाद इन्हें बहुत दूर कोई चीज बहती हुई आ रही दिखाई दी, जब वह इसके समीप पहुंची, तो मालूम हुआ कि यह मुर्दा है जिसे लाने के लिए भक्त सूरदास जी ने आज्ञा दी है।

कमाल जी ने इस मुर्दे को निकाल लिया और भक्त सूरदास जी के पास ले आये। सूरदास जी ने गोबर का लेपन करवा कर उसे पृथ्वो पर लिटा दिया, और मुख से राम शब्द कहकर गंगा जल का छींटा देने लगे। अभी उन्होंने रा अक्षर का ही उच्चारण किया था और म अक्षर अभो कह भी न पाये थे कि बह मुर्दा राम राम कहता हुआ उठकर बैठ गया।

भक्त सूरदास जी के रामनाम में इस प्रकार की अद्भुत शक्ति देखकर भक्त कमाल जी अपने मन ही मन में बहुत लज्जित हुए कि मेरे रामनाम में तो इनकी अपेक्षा कुछ भी शक्ति नहीं। इन्होंने सूरदास जी के चरणों में प्रणाम कर, और आज्ञा लेकर अपने घर आए। तथा सब वार्ता अपने पिताजी से कह सुनाई, और अपने अभिमान की क्षमा मांगी

प्रिय बन्धुओं ! रामनाम की महिमा का वर्णन कहां तक

किया जाये सत्य तो यह है कि वाणी द्वारा इसका वर्णन हो ही नहीं सकता, यह तो गूंगे की मिठाई है खाने से ही सम्बन्ध रखता है, कहने से नहीं। इसलिये तो भक्त कबीर जी बोल उठे :—

कबीर सुपनैहुं बरडायकै, जेहि मुख निकसे राम।
ता के पग की पानही, मेरे तन का चाम॥
राम नाम मनि दीप धरू, जिहि देहरी द्वार।
तुलसी भीतर बाहिरहूँ जो चाहसि उजिग्रार।२॥
तुलसी रा के कहत ही, निकसित पाप पहाड़।
फिर ग्राबन पावत नहीं देत मकार किवाड़॥३॥
पाप इन नामों के लेने से कट जाता है।
पाठ से बार राहे रंज का घट जाता है॥४॥
टाट ग्रफलाको फलाकत का उलट जाता है।
ग्राकै यमराज सिरहाने से पलट जाता है॥५॥
नाम इन नामों से रहता नहीं पदबखती की।
नाम मिट जाता है तशवीशोग़मों सखती का॥६॥
जो सुख चाहे सदा सरन राम की लेह।
कहे नानक सुन रे मनां दुर्लभ मानुष देह॥७॥
राम नाम उर में गह्यो जाके सम नहीं कोय।
जेहि सिमरत संकट मिटै दरस तिहारो होय॥८॥

प्रिय सज्जनों! पूर्व प्रार्थना कर चुका हूँ कि मनुष्य

जिह्वा को पाकर भी जो भगवान राम अथवा कृष्ण के नाम का जप नहीं करता, वह अभागा जीव मानो स्वर्ग की सीढ़ी को प्राप्त होकर भी उस पर नहीं चड़ता । यद्यपि जिह्वा तो पशु-पक्षी आदि सब योनियों में मिल जाती हैं परन्तु राम नाम का सिमरन तो केवल मनुष्य जिह्वा द्वारा ही हो सकता है, यही कारण है जो मनुष्य इस जिह्वा को पाकर भी राम नाम का जप नहीं करता, उस पर पशु पक्षी वृक्षादि सब फटकार भेजते हैं । और कहते हैं कि देव ! कभी हम भी तेरी तरह इन्सान थे किन्तु जिह्वा द्वारा भगवान का भजन नहीं किया था इसलिए अब मूक पड़े दुःख पा रहे हैं । तेरे पर धिक्कार है जो तूं हमारे दुःखो को देखता हुआ भी चुप बैठा है और राम नाम का जप नहीं करता ।

दोहा-जिह्वा तो तब लग भली, जब लग राम का नाम ।
नहिं तो काट निकालिए, भलो न मुख मैं चाम ॥

कवित्त

जपने को राम तजने को क्रोध काम,
पालने को शील धर्म बूझने को ज्ञान है ।
मारने को मन मूढ़ छोड़ने को कपट कूड़,
राखने को जतसत करने को दान है ॥

जीतनें को पांच जीत लावने को प्रेम प्रीत ।
खोजने को घट बीच कृपा निधान है ।
'मेहरदास' शरण पड़े मिट जाये जन्म डरे ।
तेरी मुक्ती करने को श्री भगवान है ॥
'वीरा' सब कुछ राम है राम बिना कछु नाहिं,
उठत बैठत हर घड़ीं राम सिमर मन माहिं ।
राम नाम को 'वीर' तूं छिन भर भी न भूल ।
रामनाम बिन जिन्दगी निरी धूल की धूल ॥
रामनाम को प्रीति में अपना आप गवां ।
'वीरां' दुनियां छोड़ के प्रीतम राम बना ।
राम नाम को सिमर तूँ विषयों से तूं भाग ।
'वीरां' आग लगायें यह तूं इनको ला आग ॥
राम प्रेम मैं 'वीरां' तूं सगले काम बिसार ।
दुनियां के हर रूप में उसका रूप निहार ॥

अन्य

नहीं कलियुग यह करयुग है यहां करनी कमाले तूं ।
वजन पापों का सिर पर है घटे तो कुछ घटाले तूं ॥
हरिजन बन तो ऐसा बन हरि सुमरन की हद करदे ।

भजन के जोर से यमराज का खाता भी रद्द कर दे ।१।
अधम गज गीध गनका जिसने हंस २ उबारे हैं ।
अजामिल से पतित भी जिस पतित पावनने तारे हैं ॥
उसी का नाम अपने नीच दासों की खबर लेगा ।
बढ़ेगा तार सिमरन का तो इक दिन तार भी देगा ।२।

—॥ हरि ओ३म् तत्सत् ॥—

सत्संग की महिमा (क)

भजन

सदा तुम करते रहो जी सत् पुरुषों का संग ।टेक।
खोटे पुरुषों की संगत से होती है मती भंग ।
दूध से अमृत को पीकर करदे जहर भुजंग ।सदा।
पानी पड़ते पड़ते सज्जनों घिस जाता पाषाण ।
ऋषि संग से किया भील को बालमीक गुणवान ।सदा।
जैसी संगत वैसी रंगत लीजो मन में धार ।
सत् पुरुषों की संगत से तुम हो जाओगे पार ।सदा।
अन्तिम बिनती 'चन्द्र' की प्यारे लीजो मन में ठान
सदाचर सत्संग के कारण होता है कल्याण ।सदा।

सवैया

ज्ञान बढ़े गुणवान की संगत ध्यान बढ़े तपसी संग की ।
मोह बढ़े परिवार की संगत लोभ बढ़े धनसों चित्त दीने ।।
क्रोध बढ़े नर मूढ़ की संगत काम बढ़े तिय को संग कीने ।
बुद्धि विवेक विचार बढ़े बुद्धिमान सुसज्जन को संग कीने ।।

प्रिय बन्धुओं—फारसी के एक कवि का कथन है—

गिले खुशबूये दर हमाम रूजे ।
रसीद अज दस्त हबूबे बदस्तम ।।१।।

बश्रो गुफ़तम के मुश्के या अम्बरे ।

के अजबूये दिलावेजी तो मस्तम ॥२॥

बगुफ़ता मन गिले नोचीज बूदम ।

बलेकिन मुद्दते बागुल नशस्तम ॥३॥

जमाले हमनशी दर मन असर करद ।

वगर्ना मन हमां खाकम के हस्तम ॥४॥

अर्थ—एक दिन सुगन्धि वाली मिट्टी, स्नानगृह में एक मित्र के द्वारा मेरे हाथों में आई ॥१॥

मैंने उससे कहा कि तूं मुश्क है या अम्बर है। क्योंकि चित्त को लुभायमान करने वाली तेरी सुगन्धि पर मैं मस्त हुआ जाता हूं ॥२॥

उसने कहा कि मैं एक तुच्छ मिट्टी थी परन्तु मैं बहुत समय तक फूलों के साथ बैठी रही हूं ॥३॥

मेरे संगी (फूलों) की सुगन्धि मेरे भी असर कर गई नहीं तो मैं वही मिट्टी हूं, जो कि हूं ॥४॥

किसी दूसरे कवि ने इसी बात को इस प्रकार कहा है-

नज़्म

इक दफ़ा का जिकर है इक शायरे शीरीबयां ।

कर रहा था सुबहुदम खुश खुश वह सैरे गुल्सतां ।१।

हाथ में मिट्टी का इक ढेला था वह पकड़े हुए ।

जिसको ले जाता था हाथों की सफाई के लिए ।२।

उसने जब फोड़ा तो खुशबू सी निकलने लग गई ।
हो गया हैरान वह गया अजब यह बात थी ॥
पूछा शायर ने बजहार देखने में खाक है ।
तूझमें खुशबू किस तरह आई है कैसे पाक है ॥
यू कहा मिट्टी ने गौ मैं देखने में खाक हूं ।
साथ फूलों के रही हूं इसलिये मैं पाक हूं ॥
देख शायर फूल की मोहब्बत की यह तासीर है ।
कल जो मिट्टी थी नजर आती वह अब अवसार है ॥६॥
साथ फूलों के रही मुझमें भी खुशबू आ गयी ।
इसलिये हर बशर को नेकों की संगत है भली ॥७॥

सतांसंग: इति सत्संग

श्रेष्ठ पुरुषो की संगत को सत्संग कहते है । यदि किसी व्यक्ति के विषय में यह मालूम करना हो कि वह कैसा है ? तो बस इसका सीधा सरल उपाय यह है कि इस बात का पता कर लिया जाये, कि वह कैसे व्यक्तियो की संगत में बैठता है बस जैसे व्यक्तियों की संगति में बैठता होगा वैसा ही उसे समझ लेना चाहिये क्योंकि कहा है—

श्लोक

हीयतेहि मतिस्तात ! हीनैः सह समागमात् ।
समैश्च समतामेति विशिष्टैश्च विशिष्टताम् ॥

अर्थ—हे प्यारे ! अपने से हीन पुरुषो की संगति करने से बुद्धि हीन हो जाती है. अपने जैसों की सगति करने से समान रहती है अपने से बड़ो की संगति करने से बड़ी उत्तम हो जाती है ।

जिन जैसी संगति करी वैसा ही फल लीन ।
कदली, सीप. भुजंग मुख बून्द एक गुण तीन ॥

अर्थ—जो जैसों की संगति करता है वह वैसा ही फल लेता है स्वाति नक्षत्र की बून्द एक ही होती है परन्तु वही केले की संघति से काफूर, सर्प के मुख में जाने से जहर और सीपी में जाने से मोती बन जाती हैं ।

दृष्टान्त नं० १८

श्लोक

अहं मुनीनां वचनं शृणोमि शृणोत्ययं वै यवनस्य वाक्यम् ।
नैवास्य दोषो नच मद्गुणोवा संसर्गजा दोपगुणा भवन्ति ॥

कहते हैं कि किसी नगर में कोई एक व्यापारी कुछ तोतों को बेचने के लिये लाया । उससे एक भक्त ने दो तोतों को खरीद लिया और अपने घर ले आया उनमें से एक तोता तो हर एक को अपशब्द बोलता था परन्तु दूसरा बड़े आदर के शब्द कहता था ।

एक दिन भक्त को पहले तोते पर बहुत क्रोध आया और उसे मार देना चाहा । परन्तु दूसरे तोते ने उसको

बर्जन किया और बोला-प्रथम मेरी बात सुनो, पुनः इसको कुछ कहना । वह यह कि हम दोनों सहोदर भ्राता हैं. और एक ही स्थान में हमारा पालन पोषण हुआ है । एक दिन की बात है कि हम दोनों एक स्थान पर दाना चुग रहे थे कि एक शिकारी ने हमको पकड़ लिया पुनः उसने मुझे तो एक महात्मा के पास बेच दिया और इसको एक दुष्ट पुरुष ने खरीद लिया । महात्मा जी की संगत से मुझे तो अच्छी बातें आ गईं और दुष्टों की संगत से इसको बुरी ।

यह सब संगति का फल है अन्यथा हम दोनों समान है अतः आप इसको मारिये नहीं बल्कि अच्छी अच्छी बातें सिखाने का प्रयत्न करें एक दिन आयेगा जब यह पहली वाणी भूलकर उत्तम वाणी बोलने लग जायेगा ।

भक्त को यह बात उचित मालूम हुई अतः उसने वैसा ही करना प्रारम्भ किया । परिणाम यह हुआ कि अल्पकाल में ही वह तोता भी उत्तम वाणी उच्चारण करने लगा । इसी वार्ता को पंजाबी के एक कवि ने इस प्रकार कहा है—

कवित्त

तोता लग्गा कहन बोल के सुन ओ प्यारे भाई ।
इक्क पिता दे दो पुत्त हां दोवों इक्को साडी माई ॥
इक्के बन विच चोगा चुगिये दोनों सक्के भाई ।
इक फंदक ने आन पकड़या सानूं लाके फाही ॥

इसनूं वेचया पास दुष्टो दे मैं संता हत्थ आया ।
इसनूँ गाली देन सिखाया मेरे ताई पढ़या ॥३॥
एहिते सबनूं मंदा बोले हिरदा बहुत दुःखावे ।
मैं आदर से कहूं आओ जी देखे ते सुख पावे ॥४॥
इसदा नहीं दोष है कोई नहीं मेरी बड़आई ।
वैसी वैसी वाणी सिक्खी जैसी संगत पाई ॥५॥
नाहीं जाती नाहीं पाती नहीं और कुछ कारण ।
जैसी संगत वैसी रंगत करलो मन विच्च धारण ॥६॥

दृष्टान्त नं० १५

अच्छे संगतरे भाई अच्छे संगतरे'

छज्जू भक्त लाहौर में रहते थे, एक दिन वह अपने चौबारे पर बैठे थे कुछ और लोग भी उनके साथ थे कि नीचे गली में एक फल बेचने वाले ने आवाज दी 'अच्छे संगतरे भाई अच्छे संग तरे' छज्जू भक्त ने साथियो से कहा सुनते हो भाई ! यह आदमी क्या कहता है ?

साथियों ने कहा-संतरे बेचता है भक्त जी ! भक्त जी बोले-भाई ! तुम समझे नहीं ध्यान से सुनो ! वह कह रहा है-'अच्छे संग-तरे' अर्थात्—

जो अच्छे लोगों का संग करता है, वह तर जाता है और 'बुरे संग मरे' । जो बुरे लोगों का संग करे है वह मर जाता है, नाश को प्राप्त होता है। भक्त जी के इन

भावों को सुनकर उनके साथी बहुत प्रसन्न हुए।

श्री गोस्वामी तुलसी दास जी का कथन है—

चौपाई

बालमीक नारद घटजोनी,
　　निज निज मुखनि कही निज होनी।
जल चर थल चर नभ चर नाना,
　　जे जड़ चेतन जीव जहाना ॥१॥
मति कीरति गति भूत भलाई
　　जब जेहिं जतन जहां जेहिं पाई।
सो जानब सतसङ्ग प्रभाऊ,
　　लोकहुं वेद न आन उपाऊ ॥२॥

दृष्टान्त नं० १६

उलटा नाम जपत जग जाना।
बालमीकि भय ब्रह्म समाना ॥

ऋषि तीर्थ यात्रा को जा रहे थे प्रेमी भक्तों ने उन्हें कुछ माया देदी थी ताकि सफर में उनके काम आये महात्मा जंगल से गुजर रहे थे कि एक डाकू ने उन्हें घेर लिया और बोला—जो कुछ तुम्हारे पास है, यहां रख दो, अन्यथा तुम्हारी खैर नहीं।

ऋषि बोले—हम तीर्थ यात्रा को जा रहे हैं, प्रेमी सज्जनों ने कुछ माया हमें दी है जो हमारे पास है परन्तु बेटा ! तुम्हारा क्या नाम है और क्या काम है ?

डाकू बोला—महाराज ! मेरा नाम रत्नाकर है, मैं इस समय का प्रसिद्ध डाकू हूं । मुसाफिरों को लूटना और मारना ही मेरा काम है ।

बच्चा बच्चा जानता है मेरे नाम को ।
और दुनियां सारी जानती है मेरे काम को ।१।
राही मुसाफिर इस जगह जो भी आता है ।
पंजे से मेरे छूट के हरगिज न जाता है ।२।
बस लूटना और मारना यह मेरा काम है ।
करके हलाल खाना भी मुझको हराम है ।३।

परन्तु बेटा ! केवल अपनी जान के लिये तुम पापों का इतना भार अपनी गर्दन पर क्यो उठाते हो ? तुम्हारा निर्वाह तो कन्द मूल से भी हो सकता है ।

गुनाह का बोझ जो गर्दन पे हम उठा के चले ।
तो सिर झुकाते हुये सामने खुदा के चले ॥१॥
कबीर जेते पाप किये राखे तले दुराय ।
परगट भये निदान सभ जब पूछे धरमराय ॥२॥
गुनाहो की मैल जो तूं जमां करता जाता है ।
क्या आगे कोई घाट है कि उस पर चलके धोलेगा ।

डाकू बोला-महाराज ! मैं केवल अपने लिये ही ऐसा नहीं करता, मेरे स्त्री है, पुत्र है, लड़की है, माता है, उन सबके लिये करता हूं ।

परन्तु क्या वह परलोक में तुम्हारे साथ इन कुकर्मों के फल को भी भोगेंगे अथवा तुम अकेले ही भोगोगे ?

क्यों नहीं महाराज ! जब मैं उनके लिए ही ऐसा करता हूँ और वह मेरी कमाई खाते हैं तो फिर मेरे साथ में कुकर्मो का फल क्यों न भोगेंगे ?

परन्तु बेटा ! हमें तुम्हारी बात पर विश्वास नहीं आता तुम उनसे पूछ आओ ?

महाराज ! मैं पूछ तो आऊं, परन्तु यदि आप आगे निकल गए तो फिर ?

नहीं बेटा ! तुम फिकर मत करो , जब तक तुम नही आते हम यहां ही बैठे हैं ।

बहुत अच्छा महाराज ! मैं अभी पूछकर आता हूं ।

रत्नाकार वहां से घर आये और वारी-बारी सबसे पूछने लगे कि मैं जो तुमको प्रतिदिन लूटमार करके धन माल लाकर देता हूं, परलोक में इन कुकर्मों का फल भोगने में तुम भी मेरे साथी बनोगे अथवा नहीं ? सबने एक ही उत्तर दिया ।

'वाह ! यह कैसे हो सकता है कुकर्म तुम करो और फल हम भोगें !' हम तुम्हें कब कहते हैं कि तुम इस तरह लूटमार किया करो हम तो यह कहते हैं कि तुम हमें खाने पीने को लाकर दो भले किसी शुद्ध व्यवहार द्वारा लादो ।

परन्तु उन शुभाशुभ कर्मों का फल तो तुम्हें ही भोगना होगा तो क्या तुम परलोक में मेरे बिल्कुल साथी न बनोगे ? न जी ! हम बिल्कुल न बनेंगे ।

यह सुनते ही रत्नाकर घर से निकल आये और ढ़ाये मारते हुए ऋषियों के चरणों में आ गिरे ऋषियों ने उठा कर छाती से लगाया और कहा बेटा ! रोते क्यों हो ?

महाराज रोऊं न तो क्या करूँ ? मेरी तमाम उम्र पापाचार में व्यतीत हो गई, मैं बड़े बड़े उग्र पाप करता रहा हूं मुझे पूर्ण विश्वास था कि मेरे सगे सम्बन्धी इन कर्मों के फल भोगने में मेरा साथ देंगे परन्तु महाराज ! उन सबने तो बिल्कुल कोरा जबाब दे दिया ।

परन्तु अब ? अब महाराज ! मुझे अपने चरणों में स्थान दीजिये व अपना शिष्य मानते हुए उपदेश कीजिए जिससे मेरा भला हो । ऋषियों ने विचार किया— यह

चिरकाल का पापी है सीधा राम नाम तो इसकी जिह्वा पर आएगा नहीं इसलिए उल्टे रामनाम का उपदेश करते हुए बोले—बेटा सब कुकर्मों को छोड़कर और एक चित्त होकर 'मरा मरा' मन्त्र का जप किया करो इससे तुम्हारे सर्व पापों का नाश होकर तुम्हें परम सिद्धिता की प्राप्ति होगी ।

इतना कहकर ऋषि आगे चले गये और वह उसी स्थान में बैठकर मरा मरा मंत्र का जाप करने लगे (मरा मरा शब्द

का दो चार बार उच्चारण करने से वह फिर सीधा राम राम ही बन जाता है) अर्थात् वह रामनाम का करने लगे और सर्वथा शुद्धात्मा होकर कालान्तर में 'महर्षि बाल्मीकी नाम से विख्यात हुये जिनकी रचना की हुई 'बाल्मीकिय रामायण' संसार भर में प्रसिद्ध है। प्रिय बन्धुओं ! इसको कहते है 'अच्छे संग तरे' अब 'बुरे संग मरे' का उदाहरण भी सुन लीजिये।

दृष्टान्त नं० १७

कहते हैं एक काक और हंस की परस्पर मित्रता हो गई एक दिन हंस को काक अपने घर ले आया और एक सूखे हुए बबूल के वृक्ष पर बैठा दिया। जिसके आस पास पड़े हुए विष्टा मांस और अस्थियों की दुर्गन्धि आ रही थी

हंस ने कहा-भाई ! मैं तो ऐसी गन्दी जगह पर एक पल भर भी नहीं ठहर सकता, हां यदि कोई तुम्हारा पवित्र स्थान हो तो वहां ले चलो। तब काक उसको राजा के प्राईवेट बगीचे में ले गया और जिस वृक्ष के नीचे बैठा राजा आराम कर रहा था उसी पर लाकर बैठा दिया और पास ही आप भी बैठ गया। हंस ने जब नीचे देखा तो उसे मालूम हुआ कि राजा साहिब बैठे हैं, और उनके सिर पर धूप आ रही है।

हंस का स्वभाव तो महात्माओं के स्वभाब जैसा होता है उसे दया आई उसने अपने दोनों पंख फैला दिये जिससे

राजा के सिर पर छाया हो गई और वह सुख का अनुभव करने लगा।

परन्तु काक का स्वभाव तो दुष्टों जैसा होता है उसने अपने स्वभाव के अनुसार ऊपर से राजा के सिर पर विष्टा कर दिया। राजा ने मंत्री से कहा। मन्त्री ने गोली चलाई काक तो झट से उड़ गया और हंस फड़फड़ाता हुआ नीचे आ गिरा, प्राण देता हुआ बोला—

नाऽहं काको हतो राजन ! हंसोऽहं निर्मले जले।
नीच संग प्रभावेन जातं जन्म निरर्थकम् ॥१॥

अर्थ—हे राजन ! मैं जो मारा गया, सो (विष्टा करने वाला) काक नहीं हूं। मैं तो निर्मल जल में रहने वाला हंस हूं। परन्तु नीच (काक) की संगति के प्रभाव से मेरा जीवन बरबाद हो गया।

श्री रामचरित्र मानस के सुन्दर काण्ड में भगवान रामचन्द्र जी विभीषण के प्रति कथन करते है।

बर भल वास नरक कर ताता।
दुष्ट संग जनि देई विधाता॥

अर्थ हे तात ! नरक में रहना वरं अच्छा है मगर विधाता दुष्ट का संग कभी न दे (क्योंकि दुष्ट का संग बारम्बार जन्म मरण और नरकादि के देने वाला होता है)

'होवत हैं गुण उत्तम नास कुसंगत ते सनाकादि डरहीं'

सम्पूर्ण ग्रन्थ और महात्मा पुरुष इस जीव को कुसंग से बचाने की बहुत प्रेरणा करते है। इसका कारण यह है कि कुसंग से मनुष्य का अधः पतन बहुत शीघ्र हो जाता है जैसे वृक्ष पर चढ़ने के लिये पुरुषार्थ की आवश्यकता होती है मगर गिरने में कुछ भी परिश्रम नहीं करना पड़ता एक मिनट में ही ऊपर से नीचे आ गिरता है इसी प्रकार से आत्मिकबल प्राप्त करने से और साधन सम्पन्न होने के लिए बहुत परिश्रम की आवश्यकता होती है, परन्तु कुसंगत से बहुत काल का किया हुआ परिश्रम और साधन मिनटों में नष्ट हो जाता हैं। विवेक और विचार का पता नहीं चलता. कि कहां लुप्त हो गये और मनुष्य अधः से अधो-गति को प्राप्त होता जाता है।

दृष्टान्त नं० १७

एक सज्जन जो महात्मा की संगति करते १२ वर्ष हो गये। तब एक दिन महात्मा बोले-देखो बेटा ! १२ वर्ष से तुम हमारी संगति और सेवा करते आये हो अब हम जाते हैं और सार रुप से दो बातों का उपदेश करते है उन पर सदाआरूढ़ रहना। प्रथम यह है कि मांस न खाना और दूसरे यह है कि शराब न पीना। यदि तुम हमारी आज्ञा का पालन करोगे तो सदा सुख पाओगे।

शिष्य ने हाथ जोड़कर चरणों में नमस्कार करते हुए कहा:- तू वचन महाराज ! तब महात्मा चले गये।

इस बात को अभी ६ मास ही व्यतीत हुए होंगे कि उस भक्त का शरीर बीमार हो गया, औषधि की गई मगर कुछ लाभ न हुआ। अन्त में एक डाक्टर आया और उसने विचार करके कहा कि यदि तुम मांस और शराब का कुछ दिन सेवन करो तो तुम्हारा रोग दूर हो सकता है।

भक्त ने कहा ! मुझे गुरु जी ने इन दोनों चीजों के सेवन करने को मना कर रखी है।

डाक्टर ने कहा-अरे भोले आदमी ! सब काम इस शरीर से ही हो सकते हैं, यदि कुछ दिन इनका सेवन कर लेने से तुम्हारा शरीर काफी समय तक के लिये बना रहे तो तुम इस शरीर से और कई शुभ कार्य कर सकते हो यह शरीर तो बड़ा दुर्लभ है। इसको सहसा नष्ट कर देना कोई बुद्धि मत्ता नहीं।

भक्त ने दिल में सोचा ! डाक्टर साहिब की बात ठीक है। ऐसा विचार कर उसने मांस शराब का सेवन प्रारम्भ कर दिया और कुछ ही दिनों में निरोग भी हो गया।

इतने में अकस्मात् महात्मा जी भी आ गये, इसने नमस्कार करके प्रार्थना की, महाराज ! इस प्रकार मेरा शरीर बीमार हो गया था किसी औषधि से भी कुछ लाभ न हुआ अंत में डाक्टर के कहने से कुछ दिन मांस शराब का सेवन किया, जिससे अब बिल्कुल निरोग हो गया हूं।

महाराज आप मेरे अपराध को क्षमा करें, मैं पुनः इनका सेवन न करूंगा।

महाराज बोले-भाई ! अब तूं हमारे उपदेश का अधिकारी नहीं है क्योंकि तूने हमारी बात पर विश्वास न रख कर डाक्टर की बात को मान लिया, हमारे से तो डाक्टर ही बड़ा निकला जो हम १२ वर्ष तक तेरे से सिरदर्द करते रहे परन्तु तुम हमारी बात पर स्थिर न रहे और डाक्टर की १० मिनट की संगत करने पर अपने धर्म से गिर गये।

अरे भाई ! यह तेरी भूल है जो तू कहता है कि मांस शराब के सेवन करने से निरोग हो गया। वास्तविक बात यह है कि तुम्हारी आयु शेष थी और तुमने अभी जीवित रहना था, मांस और शराब ने तुम्हें जीवित नहीं रखा तुम्हारे कर्मों ने तुम्हारी सहायता की है। इनके सेवन से तो तुमने अपने धर्म का नाश किया है, और कुछ विशेष बात नहीं हुई मगर जब तुम्हारी मृत्यु आयेगी. तब मांस और शराब तो क्या ? यदि अमृत भी पियोगे तब भी जीवित न रह सकोगे।

इतना कहकर महातमा जी चले गये। उसके कुछ ही दिनो बाद उस सज्जान का शरीर पुनः उसी रोग से ग्रस्त हो गया औषधि के अतिरिक्त मांस और शराब का भी कई दिन तक सेवन किया गया, परन्तु कुछ लाभ न हुआ और अन्त में वह अपने धर्म से भ्रष्ट हुआ।

भावार्थ यह है कि दीर्घ काल के सतसंग और जप तप का फल क्षण मात्र के कुसङ्ग से नाश हो जाता है ।

'कबीर' साकत संग न कीजिए दूरों जाइए भाग ।
वासन कारो परसिए तौ कछु लागे दाग ॥
'कबीर' संगत करिये साध की अंत करे निरवाह ।
साकत संग न कैरिये जाते होय बिनाह ॥

कविता

उत्तम आग विषे जरनो जिमि जाए जरे जग माहिं पतंगा ।
उत्तम या तन फोड़ मरे गिरके भव में नर शैल उतंगा ॥
उत्तम है भव माहिं मरे कर डार मुखान्तर भीम भुजंगा ।
जीवत नाहिं कर कवहुं गुण उत्तम के बन को नर भंगा ॥

* हरि ओ३म् *

सत्संग की महिमा (ख)

श्लोक

मोक्ष कर्त्री बंध हरा स्वल्प यत्नेन भद्रदा ।
उपाय कोटि भिरपि कर्तव्या साधु संगतिः ॥

दोहा

मुक्ति करन बन्धन हरन बहुत जतन जग भव्य ।
पै यह कोटि उपाय करि सत्संगति कर्त्तव्य ॥१॥

भावार्थ—यद्यपि विद्वानो ने संसार बन्धनों को काटने वाले और मुक्ति के देने वाले बहुत से उपाय यज्ञ, दान, तप तीर्थ स्नानादि बताए हैं। तथापि मुमुक्षु पुरुष को तो अल्प प्रयत्न में ही कल्याण कर देने वाले सत्संग रुप उपाय को ही अपनाना कर्तव्य है।

श्री गोस्वामी तुलसी दास जी का कथन है–
'शठ सुधरहिं सत्संगति पाई, पारस परस कुधातु सुहाई ।'

अर्थ—दुष्ट पुरुष भी सत्संगति को पाकर सुधर जाते हैं जैसे पारस के स्पर्श से लोहा सुहावना हो जाता है अर्थात् सुन्दर सोना बन जाता है।

बल्कि सन्त की महिमा तो पारस से भी अधिक वर्णन की गई है।

दोहा:—पारस में अरू सन्त में, बड़ो अन्तरो जान।
वह लोहा कंचन करैं, यह करैं आप समान॥

अर्थ—हे शिष्य ! पारस और सन्त में बड़ा भेद है ऐसे तूं जान। क्योंकि पारस तो लोहे को सोना ही कर सकता है अपने समान पारस नही बना सकता। परन्तु यह जो महात्मा है सो जैसे आप ब्रह्म रूप होते है वैसे जिज्ञासु को भी ब्रह्म रूप बना देते हैं इसलिए यह पारस से भी अधिक है

'हर के दर काने नमक रफत नमक शुद्ध"

अर्थ—नमक की खान में जो चीज चली जाये वह नमक हो जाती है। इसी प्रकार मनका भी यह स्वभाव है कि यह जिस वस्तु का अधिक ध्यान करता है उसी का रूप बन जाता है।

सवैया

जो मन नारी की ओर निहारत।
तो मन होय है नारी का रूपा॥
जो मन काहूँ सों क्रोध करे तब।
क्रोध मयी होय ताहि स्वरूपा॥
जो मन माया ही माया रटे नित्त।
तो मन बूड़त माया के कूपा॥

'सुन्दर जो मन ब्रह्म विचारत ।
　　　　तो मन होत है ब्रह्म स्वरूपा ।

बन्धुओं ! कई एक सज्जनों को इस तरह की शंका करते देखा गया है कि महाराज ! हमको इतने वर्ष भजन पाठ व सत्संग करते हो गये मगर हमें कुछ भी सुख शांति प्राप्त नहीं हुई । उनसे यह कहना है कि—

न ता हो दूर बदअमली इबादत क्या बनाती है ।
पड़ा मुर्दार कूएं में करे क्या साफ पानी को ? ॥

जब तक कि हमारा क्रियात्मक जीवन शुद्ध नहीं होता जब तक कि हम अपने मन वाणी और शरीर सम्बन्धी दोषों का त्याग नहीं करते तब तक भजन पाठ व सत्संग से हमें क्या लाभ हो सकता है ? कूप के अन्दर यदि मुर्दा तो वैसे ही पड़ा रहने दें और गागरे भर भर कर पानी को बाहर फेंकते जाव तो क्या इससे कूप का जल शुद्ध हो जायेगा ? सज्जनों ! यदि भजन पाठ और सत्संग से सुख शान्ति की प्राप्ति चाहते हो तो पहले मन वाणी और शरीर के इन दोषों का त्याग करो ।

चौपाई

चोरी हिंसा और विभचार, काया के त्रय दोष विचार ।
निंदा और कटु वाक् असत्य, वाणी के दूषन यह सत्य ॥

तृष्णा द्वेष बुद्धि और क्रोध, त्रिविध दोष मन के तू शोध ।
इहि प्रकार नव दूषन त्याग, कर सत्संग खुलेगें भाग ॥

और कई एक सज्जन इस प्रकार भी कहते हैं कि, महाराज ! प्रतिदिन सत्संग करने की क्या आवश्यकता है यदि महीने भर में दो बार सत्संग श्रवण कर लिया जाये तो क्या हानि है ?

उनसे हमारा यह कहना कि जिस प्रकार प्रतिदिन खाना पीना स्नान करना जरुरी है, घर में झाड़ू देना जरुरी है उसी तरह प्रतिदिन सत्संग करना भी जरुरी है। जिस तरह अन्न और जल स्थूल शरीर की खुराक है। जिस तरह एक दिन भी घर में झाड़ू न देने से उसमें गन्दगी एकत्रित हो जाती है। उसी प्रकार आंख, कान, जबान आदि इन्द्रियों के रास्ते से हमारे मनरूपी मन्दिर में प्रतिदिन काफी कूड़ा कर्कट जमा हो जाता हैं। जिसे अगर साथ ही साथ सतसंग की झाड़ू से साफ करते रहे, तोमन शुद्ध हो रहता है अन्यथा इसमें कई प्रकार की गन्दगी भर जाती है।

दृष्टान्त नं० १९

एक बार तीर्थ यात्रा के प्रसंग में एक सर्प और न्योले की लड़ाई देखने का अवसर प्राप्त हुआ। सर्प जब न्योले को काटता तब न्योला झट लड़ाई बन्द करके थोड़ी

दूर जाकर एक बूटी का रस को पी आता और फिर आकर सर्प से लड़ने लगता। जब वह फिर काटता तब यह फिर बूटी का रस पीने चला जाता। इस तरह की बुद्धिमत्ता से लड़ाई करने का परिणाम यह हुआ कि न्योले ने सर्प को मार डाला।

बात दरअसल यह थी कि न्योला सर्प का जहर दूर करने वाली बूटी को जानता था और उसके रस का पान करके मात्र ही साथ सर्प के जहर को दूर करता जाता था यदि वह ऐसे न करता तो सर्प का जहर उसके अन्दर जमा रहने से अवश्य उसकी मृत्यु हो जाती।

इसी तरह हमारे मन के अन्दर भी शब्द स्पर्श रूप रस गंधादि विषयों और काम क्रोध आदि सर्पों का विष प्रतिदिन दाखिल होता रहता है। यदि हम अपना जीवन चाहते हैं तो हमारा भी कर्तव्य है कि हम भी प्रतिदिन सत्संग रुपी अमृत बूटी का पान करते हुए साथ ही साथ इस विषैले विष को दूर करते रहें।

सुना है कि अमृत में वह शक्ति है कि जो कोई उसे पान कर लेता है उसके जन्म मरण रुप समस्त दुःखों का नाश हो जाता है और उसे परमपद की प्राप्ति होती है किन्तु प्रश्न यह उठता हैं कि अमृत रहता कहां है ?

श्लोक

अब्धौ बिधौ बधुमखे फणिनां निवासे।
स्वर्गे सुधा वसति वै विबुधा वदन्ति ॥
क्षारं क्षयं पतिमृतं गरलं पतन्ति ।
संगे सुधा वसति वै भगवज्जनानाम् ॥

व्याख्या—अमृत कहां रहता है ? इस प्रश्न को सुनकर उत्तरदाता ने कहा—'अब्धौ' अमृत समुद्र में रहता है क्योंकि जब देव और दानवों ने परस्पर मिलकर क्षीर सागर का मन्थन किया था, तो उसमें से चौदह (१४) रत्न निकले थे उनमें से एक रत्न अमृत भी निकल था । इसी अभिप्राय को लेकर उत्तरदाता ने यह कह दिया कि अमृत (अब्धौ) समुद्र में रहता है ।

परन्तु प्रश्नकर्त्ता को इस उत्तर से संतोष न हुआ उसने कहा—असृत समुद्र में रहता हो तो 'क्षार' समुद्र खारी नहीं होना चाहिए, अमृत क्या और खारा पन क्या ?

इस पर उत्तरदाता ने फिर कहा—'विधौ, अमृत चन्द्रमा में रहता है, क्योंकि आयुर्वेद के ग्रन्थों में लिखा है कि रात्रि के समय औषधियां चन्द्रमा से अमृत को ग्रहण करती हैं । जिससे उनमें रोग को दूर करने और आयुर्बल के बढ़ाने की शक्ति उत्पन्न हो आती है । इसी आश्रय को लेकर उसने कह दिया कि अमृत चन्द्रमा में रहता हैं ।

किन्तु प्रश्नकर्त्ता को इस उत्तर से भी सन्तोष न हुआ उसने कहा यदि चन्द्रमा में अमृत रहता होवे तो फिर 'क्षयं' चन्द्रमा की कला क्षय को क्यों प्राप्त होती रहती है ? यह जो चन्द्रमा में १५ दिन बढ़ना और १५ दिन घटना पाया जाता है यह नहीं होना चाहिये अमृत क्या और उसमें फिर क्षय को प्राप्त होना क्या ?

इस पर उत्तरदाता ने फिर कहा 'बधु मुखे' अमृत स्त्रियों के मुख में रहता है ।

परन्तु प्रश्नकर्ता को इस उतर से भी सन्तोष न हुआ उसने कहा यदि स्त्रियों के मुख में अमृत रहता होवे तो फिर 'पतिमृत' उनके क्यों मर जाते हैं ? अमृत क्या और अमृत होना क्या ?

इस पर उतरदाता ने फिर कहा 'फणिनां निवासे' अमृत नागलोक में रहता है, बड़े बड़े नाग (सर्प) बहुत लंबी-लंबी आयु वाले होते है उसका कारण यह है कि उनमें अमृत रहता है ऐसा शास्त्रों में लेख आता है, इसी आशय को लेकर उसने कह दिया कि अमृत नागलोक में रहता है ।

परन्तु प्रश्नकर्ता को इससे भी सन्तोष न हुआ । उसने कहा यदि नागों (सर्पों) में अमृत रहता होवे तो 'गरलम्' फिर उनमें विष नहीं होना चाहिये अमृत का होना क्या और साथ में विष का विद्यमान होना क्या ?

इस पर उत्तरदाता ने फिर कहा 'स्वर्गे सुधा वसति वै विबुधा वदन्ति' निश्चय करके स्वर्ग में अमृत रहता है ऐसा विद्वान कहते हैं। सकाम कर्मकाण्डी विद्वान लोगों का कथन है कि यज्ञादि पुण्य कर्मों के प्रभाव से देवता लोग स्वर्ग में अमृत का पान करतेहै जिससे उनका आयुर्बल अधिक होता है, और भोगों को भोगने की उनमें शक्ति बनी रहती है।

परन्तु प्रश्न कर्ताको इससे भी सन्तोश न हुआ उसने कहा यदि स्वर्ग में अमृत रहता होवे तो फिर 'पतन्ति' देवता-ओं का स्वर्ग से गिरना कैसे हो सकता है ?

श्री मद्भगवद् गीता में कहा हैं । अध्याय ९ श्लोक २१

तं भुक्त्वा स्वर्ग लोकं विशालं ।

क्षीणे पुण्ये मर्त्य लोकं विशन्ति ॥

एवं त्रयी धर्म मनुप्रपन्ना ।

गतागतं काम कामा लभन्ते ॥

अर्थ—और वे(देवता लोग)उस विशाल स्वर्ग लोक को भोग कर, पुण्य क्षीण होने पर, मृत्यु लोक को प्राप्त होते हैं । इस प्रकार स्वर्ग के साधन रूप तीनों वेदों में कहे हुये सकाम कर्मो के शरण हुए, और भोगो की कामना वाले पुरुष बारम्बार जाने आने को प्राप्त होते हैं। अर्थात पुण्य के

प्रभाव से स्वर्ग में जाते है और क्षीण होने से मृत्यु लोक में आते है।

योगी रोगी भक्त बांबरे, ज्ञानी पूत निखट्टू।
कर्म काण्डी यूं फिरे, ज्यों भाड़े के टट्टू॥

इस प्रकार जब प्रश्नकर्ता को किसी जबाब से सन्तोष न हुआ तो उत्तरदाता ने अन्तमें कह दिया कि 'संगेसुधा वसति वै भगवज्जनानाम्' जो महात्मा पुरुष अनन्य चित मे भगवत परायण हो चुके है, जिनको चतुर्दश भुवनमें सिवाय परमात्मा के और कुछ भी प्यारा नही है यह अमृत उनमे रहता है और इनकी सगत करने वाले भक्त जनों को उस अमृत का लाभ होता है जिसको पान करके वे भक्त जन सदा के लिये कृत्य २ हो जाते है उनके जन्म मरन रूप दु:खो का सदा के लिये नाश हो जाता है।

इस जबाब को पाकर प्रश्नकर्ता को संतोष हो गया क्योंकि कहा भी है :—

श्लोक

गङ्गा पापं शशी तापं, दैन्य कल्प तरुस्तथा।
पापं तापं च दैन्य च घ्नन्ति सन्तो महाशया:॥

अर्थ– श्री गंगा जी पापको चन्द्रमा ताप को और कल्प वृक्ष दैन्य को नष्ट करने में ही समर्थ हैं, किन्तु महानुभाव

सन्त तो पाप, ताप ग्रोर दैन्य इन तीनों को नष्ट करने में समर्थ होते हैं।

व्याख्या—'गंगा पापं' श्री गंगाजी पापों को दूर करती हैं। परन्तु किन पापों को ? पिछले पापों को दूर करती हैं, आगे होने वाले पापों को दूर नहीं करती। हमारे हिन्दू ग्रन्थों में इस प्रकार का लेख मिलता है कि, यदि कोई पुरुष श्रद्धा भक्ति सहित श्रीगङ्गा जी में स्नान करके हाथ जोडकर हृदय से यह प्रार्थना करे कि, मातेश्वरी गंगे ! मेरे से जान बूझकर अथवा अनजान रीति से जो पाप कर्म हो गये हैं, आप कृपा करके उसको क्षमा करें, तो पतित पावनी श्रीगङ्गा माताजी उसके पहले किये गए पापों को क्षमा कर देती हैं।

परन्तु यदि वह प्रार्थना केवल गंगा जी में स्नान के समय ही हो और घर आकर फिर वही पाप कर्म करने लग जाये तो फिर न उसके पिछले पाप ही क्षमा होते है और न अगले।

'शशी तापं चन्द्रमा ताप को दूर करता है। दिन में काम काज से थका हुआ और सूर्य की घाम से तपा हुआ मनुष्य जब रात्रि को चन्द्रमा की शीतल सुखद चांदनी में आराम से लेट जाता हैं अथवा सो जाता हैं। तो चन्द्रमा उसके दिन में होने वाले ताप को हर लेता हैं। और उसे थोड़ी देर के लिये सुख शान्ति की प्राप्ती होती हैं परन्तु

ज्योंही प्रातः सूर्य नारायण उदय होतेहैं और अपनी गर्म-गर्म किरणे पृथ्वी पर फैंकते हैं, तब वह ताप मनुष्यको फिर उस प्रकार व्यापक हो जाता हैं।

'दैन्यं कल्पतरुः' कल्प वृक्ष दीनता दरिद्रता को दूर करता हैं। शास्त्रो में इस तरह लिखा है कि यदि पुण्य वश जितना भी धन माँगो मिल जाता है परन्तु उस धन को पाकर यदि उसे बुरे व्यवसनों में व्यय करना शुरु करदे तो वह पुरुष वैसे का वैसा दीन हो जाता है।

भाव यह है कि गंगा जी ने पापो को दूर किया किन्तु पिछले पापों को दूर किया आगे होने वालों को नहीं चन्द्रमा ने ताप को दूर किया परन्तु रात्रि भर के लिये, दिन को नहीं। इसी प्रकार कल्प वृक्ष ने दीनता को दूर किन्तु थोड़े काल के लिए सदा के लिए नहीं परन्तु :—

'पापं तापं च दैंन्यं च, घ्नन्ति सन्तो महाशयाः'

यह महानुभाव सन्त तो इस जीव के सम्पूर्ण पाप ताप और दरिद्रता को सदा के लिए समूल नष्ट कर देते हैं।

इन महानुभाव सन्तों के पास जैसा कोई जिज्ञासु आता है, अधिकारी भेद से यह उसे वैसा ही उपदेश देते हैं और वहसाधन सम्पन्न अधिकारी पुरुष महात्माओं के बताये हुए उपदेश द्वारा शीघ्र ही शुद्ध अन्तःकरण वाला बन जाता है।

तब यह महानुभाव उसे ज्ञान का उपदेश कर देते हैं जिससे उसके पाप ताप दीनता दरिद्रतादि सम्पूर्ण दुःखों का नाश होकर उसे परमानन्द की प्राप्ति होती है। जो मनुष्य जीवन का परम लक्ष्य है। श्री मद्भागवद् गीता अध्याय ४ श्लोक १७ में भगवान् का कथन है :—

यथैधांसि समिद्धोऽग्नि भर्स्मसात्कुरुतेऽजर्न।
ज्ञानाग्नि सर्व कर्माणि भस्मसात्कुरुते तथा॥

अर्थ—हे अर्जुन ! जैसे प्रज्वलित अग्नि ईंधन को भस्म मय कर देता है, वैसे ही ज्ञान रूप अग्नि सम्पूर्ण कर्मों का भस्म मय कर देता है।

भिद्यते हृदय ग्रन्थि श्छिद्यन्ते सर्व संशयाः।
क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन्दृष्टे परावरे॥

अर्थ—उस परावर परमात्मा का साक्षात्कार होने पर हृदय जो अज्ञान को ग्रन्थि पड़ी हुई है वह खुल जाती है और सर्व संशयों का नाश हो जाता है तथा सर्व कर्म क्षय को प्राप्त हो जाते हैं।

दृष्टान्त नं० २०

कहते हैं एक राजा अपने मन्त्री और मित्रों सहित किसी जंगल से गुजर रहा था। कि कुछ दूर पेड़ के नीचे एक महात्मा को बैठा देख कर विचार करने लगा यह बहुत निर्धन है इसकी कुछ सहायता करनी चाहिये।

इस विचार से राजा ने एक सौ रुपया मन्त्री के हाथ महात्मा के लिये भेज दिया। किन्तु महात्मा ने उत्तर दिया कि हमें सौ रुपये की जरुरत नहीं हैं राजा को कहो कि किसी कंगाल को दे देवे।

मन्त्री ने यह वापस आकर राजा से कही, तब राजा ने सोचा शायद सौ रुपया थोड़ा हैं और महात्मा को आवश्यकता अधिक है इस लिये उन्होंने नहीं लिया। तब राजा ने ५०० रुपया देकर फिर मन्त्री को भेजा किन्तु इस परभी महात्मा ने वही उत्तर दिया कि हमें ५०० रुपये की जरुरत नहीं है राजा को कहो कि किसी कंगाल को दे देवे। मन्त्री ने फिर यही बात राजा से आकर कही तब राजा १५-२० हजार रुपया लेकर स्वयं महात्मा के पास पहुँचा और बोला महात्मन्! इसे स्वीकार करो? इस पर भी महात्मा ने वहीं कहा कि राजन् हमें इसकी जरुरत नहीं है किसी कंगाल को दे देना। इस बात को सुनकर राजा बोला-महात्मा जी आप से बढ़कर कंगाल भला और कौन होगा? आपके पास रहने को कोई अच्छा स्थान नहीं, सोने को चारपाई नहीं ओढ़ने को वस्त्र नहीं. यह सब कंगालों वालेके ही तो लक्षण हैं

महात्मा बोले—भाई! हम कंगाल नहीं हम राजाओ के राजा, महाराजा हैं। हम तो शहन्शाह हैं। हमें आप से कुछ लेने की क्या जरुरत है?

राजा बोला-महात्मा जी ! राजाओं के पास तो बहुत से नौकर होते हैं, आपके पास कौन से नौकर हैं ? महात्मा बोले- १० इन्द्रियाँ और एक मन, यह ११ हमारे नौकर है जो हर समय हमारी सेवा में खडे रहते हैं ।

राजा बोला- महात्मा जी ! राजाओं के पास फौज होती हैं, आपके पास कौन सी फौज हैं ?

महात्मा बोले—हमारे पास दैवो गुणों की बड़ी शक्तिशालिनी फौज हैं, 'ववेक और वैराग्य उसके कमान्डर हैं । जो काम क्रोधादि अन्तरीय शत्रुओं का नाश करने में हर समय तैयार रहते हैं और बाहरी हमारा कोई शत्रु नहीं है अत: हमे बाहरी सेना की जरुरत भी नहीं ।

राजा बोला—महात्मा जी ! राजाओं के पास बहुत सा खजाना होता है आपके पास कौन सा खजाना है ?

महात्मा बोले—हमारे अन्दर आत्मचिन्तामणि रुप महान निधि हैं जिससे हम सदा तृप्त रहते हैं और बाहरी धन की हमें जरुरत ही नहीं पड़ती, इसलिये हम उसको रखते ही नहीं । वैसे हमारे पास एक ऐसी रसायन है हम जिससे जितने मन लोहे को चाहें सोना बना सकते हैं किन्तु हम बनाते नहीं क्योंकि हमें आवश्यकता नहीं है ।

इस प्रकार जब महात्मा जी ने राजा के सब प्रश्नों का यथोचित जवाब दे दिया और वह रुपया भी न लिया तो

राजा महात्मा जी को नमस्कार करके अपने महल को चल दिया ।

राजा जब रात्रि को पलङ्ग पर लेटा तो सोचने लगा कि महात्मा जी के पास रसायन अवश्य होगी, तभी तो वह अपने को महाराजा मानते हैं । क्या ही अच्छा हो यदि वह मुझे २५-३० मन लोहे का सोना बना देवें, ताकि मैं उस दौलत से अस्त्र शस्त्र तैयार करके एक देश और भी जीतलूं ।

परन्तु मुझे महात्मा जी के पास इसी समय चलना चाहिये क्योंकि अब उनके पास और कोई भी न होगा । ऐसे विचार कर राजा उसी समय महात्मा जी के पास जा पहुंचा और चरणों में नमस्कार की ।

महात्मा बोले-राजन ! अब फिर इस रात्रि के समय में तेरा आना कैसे हुआ ।

राजा बोला-महाराज ! यदि आपकी दयादृष्टि इस सेवक पर हो जाये, और आप २५-३० मन लोहे का सोना बना दें तो मैं उस धन की सहायता से साथ वाला एक मुल्क और भो जोत लूं ।

महात्मा बोले-राजन् ! अब बताओ, तुम कंगाल हो या हम ?

राजा ने हाथ जोड़ कर कहा, महाराज ! कंगाल मैं ही हूं

आप मुझ कंगाल पर कृपा की नजर करते हुये इस सेवक की प्रार्थना को स्वीकार करें ।

महात्मा बोले-राजन् ! कोई बात नहीं जितने मन सोना तुम्हें दरकार होगा उतने मन ही तैयार कर दिया जायेगा। परन्तु कुछ समय तक तुम्हें प्रति दिन यहां आना होगा और जो कुछ हम कहें उसे अपने जीवन में क्रियात्मक रूप से लाना होगा ।

राजाने हाथ जोड़कर कहा-भगवन् ! मैं प्रतिदिन आपके दर्शन को आया करूंगा आपके मुखराविन्द से निकले हुये उपदेश आदेश को अपने जीवन में धारण करूंगा । इसके बाद राजा प्रतिदिन महात्मा जी के पास आने लगा ।

महात्मा जी ने प्रथम राजा के समस्त व्यसनो को दूर करते हुये उसे साधनों में लगाया । जब वह साधन सम्पन्न हो गया और उसके मन की सब वासनायें भली प्रकार शांत हो गई तब महात्मा जी ने उस ज्ञान (ब्रह्मविद्या) का उपदेश कर दिया जिसे पाकर राजा अपनी मस्ती में मस्त रहने लगा और उसे सोना बनाने की, बात याद तक न रही, तो एक दिन समय पाकर महात्मा जी ने कहा-राजन ! तुम्हें जितने मन सोना दरकार हो उतने मन लोहा ले आओ आज हम उसे सोना बना देंगे ।

राजा ने हाथ जोड़ कर कहा-महाराज ! अब तो आपकी

कृपा से मेरा मन ही सोना बन गया है, अब मुझे बाहरी सोना बनाने की आवश्यकता ही नहीं रही। अब मैं भी ब्रह्म ज्ञान रूपी महान रसायन को पाकर शहन्शाहो का शहन्शाह बन गया हूं।

चाह गई चिन्ता मिटी मनुआ बे परवाह।
जिनको कुछ नहीं चाहिये ते शाहन के शाह ॥ १
चाह चुहडी चाह चम्यारी चाह नीचन की नीच।
यह तो पूर्ण ब्रह्म था जो चाह न होती बीच ॥२
हम खुदा थे गर न होता दिल में कोई मुद्दआ।
कामनाओं ने हमारी हमको बन्दा कर दिया ॥३
सात गांठ कौपीन में साधु न माने शङ्क।
राम अमल राता फिरे गिने इन्द्र को रंक ॥४
तात ! स्वर्ग अपवर्ग सुख धरिय तुला इक अंग।
तुलन ताहि सकल मिलि जो सुख लव सत्संग ॥५

अर्थ—हे प्यारे ! यदि स्वर्ग और मोक्ष के समस्त सुखों को तराजू के एक पलडे में रखा जाय तो भी वह सब मिला कर (दूसरे पलडे पर रखे हुए) उस सुख के बराबर नहीं हो सकता जो कि क्षण मात्र के सत्संग से होता है।

कवित्त

जाके कन्दरा पहाड़ देखो बैठके उजाड देखो,
जोगी कन्नपाड़ देखो देखो खाक लायके।

मूर्ति के दरस देखो बरत नेम बरत देखो.
तीर्थों को परस देखो देखो गंगा न्हाय के ॥
करके वैराग देखो रात सारी जाग देखो,
धार के त्याग देखो देखो ध्यान लायके ।
सुख की प्राप्ति नहीं और किसी साधन में,
होता है आनन्द जैसा सत्संग पायके ॥
—:॥ हरि ओ३म् तत्सत् ॥ :—



मृग तृष्णा का जल

रुबाई

'ऐ मेहर' याद रख कि है दुनियां गुजश्तानी ।
तू इसमें फंस गया तो बस अन्धेर हो गया ॥
मनजर बदलते रहते हैं यां ख्वाब की तरह ।
अपना तो देख-देख के दिल सेर हो गया ॥
नमूदोबूद को आकल हबाब समझते हैं ।
वही हैं जागते जो दुनियां ख्वाब समझते हैं ।
अरे न आओ दुनियां एदूं के धोखे में ।
सुराब है जिसे मौजेआब समझते हैं ॥२

प्रिय सज्जनों ! मृग तृष्णा का जल. मरुस्थल का जल और सुराब यह तीनों पर्यायवाचक शब्द हैं अर्थं इनसे रेतली भूमि का वह भाग है जिसे देखकर जल के होने का शक हो जाता है परन्तु वास्तव में वहां जल होता नहीं । बालू (रेत) पर सूय की रश्मियां (किरणें) पड़ने से केवल नेत्रों को धोखा ही होता है परन्तु यह धोखा बहुत हो भयानक होता है । कोई भी मनुष्य अथवा पशु पक्षी जब इस धोखे में आ जाता है. तब उसकी कुशल नहीं होती । वह अवश्य मृत्यु को

प्राप्त होता है और तड़प-२ कर अपनी जान दे देता है।

गर्मी के दिनों में मारवाड़ के रेगिस्तान (मरुस्थल) में प्रायः यह धोखा हुआ करता है मुसाफिर (यात्री) प्रत्यक्ष देखता है कि आगे दरिया लहरें मार रहा है। आकाश पर पक्षी मंडला रहे हैं और उसके तट पर हरे-भरे वृक्ष विद्यमान हैं।

प्यासा मुसाफिर उसकी ओर चल पड़ता है। ज्यों-२ वह आगे बढ़ता जाता है त्यों-२ दरिया भी आगे-२ होता जाता है इस प्रकार वह मीलों दूर निकल जाता है परन्तु वही दृश्य उसके सम्मुख रहता है अन्त में वह थक कर गिर पड़ता है, जिव्हा बाहर आ जाती है, ओष्ठ सूख जाते हैं नेत्र पथरा जाते हैं और वह देखते ही देखते दुनियां से कूच कर जाता है।

मनुष्य तो कभी इस धोखे से बच भी जाते हैं क्योंकि रेगिस्तान के रहने वाले लोग उनको सूचित कर देते हैं। परन्तु अफसोस है उन जंगली पशुओं पर, जिनकी दृष्टि उस पर पड़ जाती है और वह उस ओर चल पड़ते हैं। उनको इस धोखे का क्या ज्ञान ? आखिर वह चलते-२ हार जाते हैं, वह दृश्य उनके नेत्रों से लोप भी नहीं होने पाता कि मृत्यु आकर उनका गला पकड़ लेती है और वह वहीं तड़प-२ कर प्राण दे देते हैं। इसी कारण इस धोखे का नाम संस्कृत में 'मृग तृष्णा का जल' है।

जिस प्रकार मरुस्थल में मृग तृष्णा के जल का धोखा हो जाता है उसी प्रकार इस जीवन में भी मनुष्य को कई प्रकार के धोखे हो जाते हैं। किसी को स्त्री का, किसी को पुत्र का, किसी को रिश्तेदारों और सम्बन्धियों का, किसी को धन दौलत और मान प्रतिष्ठा का, किसी को विद्या का, किसी को अकल का और किसी को हुस्न और जवानी का धोखा हो जाता हैं। इस तरह के अनेक धोखे मनुष्य अपने जीवन में खाता हैं। और एक-२ धोखा इसके सर्वनाश का कारण बन जाता है। गुरु साहिब ने ठीक कहा है।

गौड़ी महल्ला ९

प्राणी को हरि जस मन नहीं आवे।
अहनिश मगन रहे माया में कहो कैसे गुण गावे॥
पूत मीत माया ममता स्यों, एहि विधि आप बन्धावै।
मृग तृष्णा ज्यों झूठों एहि जग, देख तास उठ धावे॥
भुक्त मुक्त का कारण स्वामी, मूढ़ ताहि बिसरावै।
जन नानक कोटन में कोऊ, भजन राम को पावै॥

धनासरी महल्ला ९

साधो ! एहि जग भरम भुलाना।
राम नाम का सिमरन छोडया माया हाथ बिकाना॥
मात पिता भाई सुत बनिता ताकै रस लपटाना।
जोबन धन प्रभुता के मद में अहनिश रहें दिवाना॥

दीन दयाल सदा दुःख भंजन तास्यों मन न लगाना ।
जन नानक कोटन में किनहूं गुरु मुख होय पछानी ॥

सारग महल्ला ६

हरि बिन तेरो को न सहाई ।
का की मात पिता सुत बनिता को काहु को भाई ॥
धन धरनी अरु सम्पत सगरी जो मान्यों अपनाई ।
तन छूटे कछू सग न चालैं कहां ताहिं लपटाई ॥
दीन दयाल सदा दुःख भंजन तास्यों रुचि न बढ़ाई ।
नानक कहत जगत सब मिथ्या ज्यों सुपना रैनाई ॥

प्रिय सज्जनो ! गुरु जी के इन वाक्यो में कुछ भी सन्देह नहीं हैं जब हम स्पष्ट देखते है कि दुनियां नाशवान हैं इसके सब पदार्थ और सम्बन्ध भी नाशवान हैं। परन्तु हमारा प्रमाद इतना बलवान है कि सब कुछ देखते और समझते हुए भी अहर्निश उन्हीं धन्धों में संलग्न रहते हैं अन्त में ज्ञात होता है कि निरा धोखा ही था। मृग तृष्णा का जल ही था। जिसके पान करने की हम व्यर्थ चेष्टा करते रहे। परन्तु यह ज्ञान उस समय उत्पन्न होता है. जब समस्त आयु व्यतीत हो जाती हैं सम्भलने का समय हाथ से निकल जाता है और जान लाबों पर आ जाती है तब इसके अन्दर से यह आवाज आती है :—

वायहसरत वक्तेमुरदन, आज यह उकदा खुला।
ख्वाब था जो कुछ कि देखा, जो सुना अफसाना था ॥१
कहां है उमरे गुजश्ता, 'नसीर' पीटा कर।
गया है सांप निकल, अब लकीर पीटा कर ॥२

तब यह इन्सान सिर धुनता है, रोता है, पश्चाताप करता है, परन्तु जो समय निकल गया, वह कब हाथ आता है ? वही बात होती है।

अाच्छे दिन पाछे गये हर स्यों कियो न हेत।
अब पछताये होत क्या जब चिड़ियां चुग गई खेत ॥१
करनों हुतो सो न कियो परयो लोभ के फन्द।
नानक समयो रम गयो अब क्यों रोवत अन्ध ॥२

मन की मन ही माहिं रही
न हरि भजे न तीरथ सेवे चोटी काल गही ॥१

दृष्टान्त नं० २१

कहते है किसी राजा के दरबार में बुद्धू मस्खरा रहता था, एक दिन बिलास के तोर पर राज ने उसे एक छड़ी (सोटीं) दी, और कहा कि जब कोई तुझको अपने से अधिक बुद्धू (बे अक्ल मिल जाये तब यह छड़ी उसको दे देना। मस्खरे ने हंसते हुए उस छड़ी को ले लिया और अपने घर किसी एकान्त स्थान में रख छोड़ी।

कुछ समय पश्चात् राजा बीमार हो गया और उसके

बचने की कोई आशा न रही और सभी लोग अन्तिम दर्शन करने को आने लगे। सबसे आखिर में वह मस्खराभी हाथ में छडी लेकर जा पहुँचा, और बोला-कहो महाराजा साहिब ! क्या हाल हैं ? राजा ने धीमो स्वर से कहा 'बिलकुल सफर की तैयारी है।'

मस्खरा बोला-कितनी दूर का सफर है ? राजा नें कहा इतना लम्बा सफर है कि उधर से कोई वापिस ही नहीं आ पाता।

शेअर

फिर न मुल्के अदम से कोई कि मैं पूछूं।
कहो मुसाफिरो मन्जिल पर क्या गुजरती हैं?

मस्खरे ने कहा-'सरकार ने रास्ते के लिये कोई सामान भी साथ लिया है यां नहीं ?

राजा ने लम्बा सांस लेकर कहा- अफसोस मैं ऐसा कुछ सामान साथ नहीं ले सका जो इस रास्ते में काम आवे।

मस्खरे ने कहा-तो बहुत अच्छा !यह अपनी छडी आप ही संभालिये। क्योंकि आप ही मेरे से अधिक बुद्धू (मूर्ख निकले। मैंने एक दिन कहीं जाना होता है तो मार्ग का खर्च पहले पास रख लेता हूं। आपने इतनी दूर जाना था परन्तु कुछ भी सामान साथ न लिया।

वाह ऐ बेखबरी ! तुम्हें खबर खाक नहीं ।
सफ़र सिर पर है और सामने सफर पास नहीं ॥१
बीज बोकर फल भीखाये तुमने हैं यहां ।
आक्वत के वास्ते भी कुछ तो बोना चाहिये ॥२

परन्तु अब क्या हो सकता था? राजा रोने लगा, और रोते २ जान दे दी ।

प्रिय बन्धुओं ! यही हाल हम में से बहुतो का है हम भी दुमिया के धोखों में इस कदर फंस जाते हैं कि मौत को बिल्कुल भूल जाते है और उस वक्त होश आती हैं, जब खाली हाथ चलते हैं ।

बिना हरि नहीं है कोई सहाई झूठ मात अरु तात ।
किस विधि पार लगेगा बेडा सब सागर से भ्रात ॥
सांझ सवेरे उठ जायेगा क्य फिरता ईठलाता ?
जाकर क्या बतलाये तूं क्या लाया सौगात ॥२
यह संसार है चौपड वाजी गोट सांझ प्रभात ।
ऐसी चाल चलो तुम जिससे होय न बाजी मात ॥
पूर्ण स्वामीं घट में तेरे देख मार का झात ।
दिल की पहले करो सफाई यही बड़ी करामात ॥४

प्रिय सज्जनों ! कभी आपने विचार किया, संसार में अवश्य प्राप्त होने योग्य क्या वस्तु हैं ? क्या दीर्घ आयु क्या अच्छा स्वास्थ? बहुत सा धन? बहुत सी मान प्रतिष्ठा

क्या बहुत से मित्र सगे सम्बन्धी ?

जरा विचार करने पर आपका हृदय स्वयं ही उत्तर देगा कि यह सब वस्तुएं सन्देह आस्पद हैं अर्थात अत्यन्त प्रयत्न करने पर भी इनका प्राप्त होना कोई निश्चित नहीं हो सकता है, मिले अथवा न मिले ।

परन्तु संसार में अवश्य प्राप्त होनें योग्य केवल एक ही वस्तु है, जिसको मृत्यु बोलते हैं । ब.लक हो अथवा वृद्ध स्त्री हो अथवा पुरुष, पन्डित हो अथवा मूर्ख, राजा हो अथवा कंगाल, बलवान हो अथवा निर्बल, आस्तिक हो अथवा नास्तिक वैद्य हो अथवा डाक्टर,मृत्यु की जिद से कोई नहीं बच सकता ।

राना राओ न को रहे रंग न तुंग फकीर ।
वारी आपो आपनी कोई न बाँधे धीर ॥ १
जगत चबोना काल का चाबत है दिन रात ।
कुछ चाबे कुछ चब रहा कुछ झोली कुछ हाथ ॥२

दृष्टान्त नं० २२

कहते हैं! अफलातून हकीम ने यमराज के पास प्रार्थना पत्र भेजा कि मुझे मेरी मृत्यु से छः मास पूर्व सूचना दी जाये

अफलातून की दर्खास्त मन्जूर हुई और समय आने पर उसे छः मास पूर्व ही सूचना दी गई ।

अफलातून ने मृत्यु की सूचना मिलते ही अपनी शक्ल

के सदृश मसाले के अफलातून बनाने शुरु कर दिये उन सबकी शक्लो सूरत नकलो हरकत बिलकुल अफलातून जैसी ही थी।

जिस दिन यमदूत ने उसकी जान निकालने के लिये आना था, उस दिन पहले ही उसने पहले जैसे कई अफलातून एक कतार में खडे कर दिये और स्वयं भी उनमें छिप कर खडा हो गया।

यमदूत एक दिन ही आकृतिके सैकडो अफलातून देखकर हैरान रह गया, आखर जान निकालूं तो किसकी ? इसी उलझन में परेशान रह गया, लाचार वापस लौटा और सब बात यमराज को कह सुनाई। यमराज ने दूतके कान में कुछ बात समझाई और पुन: प्राण निकालने कीं आज्ञा फरमाई यमदूत फिर आ गया, और एक ही कतार में सैकडों अफलातून देखकर बोला-वाह वाह क्या कहना है? कारीगर ने कारीगरी में तो कमाल ही कर दिया हैं, परन्तु एक कसर (त्रुटि रह गई है।

यह बात जब असली अफ़लातून ने सुनी तो उससे रहा न गया, और झट आगे बढकर बोला-क्या कसर रह गई है।

यमदूत ने उसे अपनी ओर खैंचते हुए कहा-'बस यही कसर रह गई।' इतना कहा और उसकी जान निकास ली

प्यारे सज्जनों! जब हिरण्यकश्यप और रावण जैसे वीरों

को प्राप्त किये हुए जोधा इस काल चक्कर से न बच सके तो फिर इस बेचारे अफलातून की तो बात ही क्या थी?

दृष्टाँन्त नं० २३

एक राजा ने एक बहुमुल्य महल बनवाकर यह घोषणा कर दी कि यदि किसी व्यक्ति को इस महल में कोई दोश नजर आये तो बताये जाने पर उहें दूर कर दिया जायेगा और युक्ति युक्त दोष बताने वाले को परितोषिक (इनाम) भी दिया जायेगा।

राजा की इस घोषणा को सुनकर दूर२ से लोग आने लगे, जो भी महल को देखता, बहुत प्रशसा करता। इस प्रकार राजा के इस महल की दूर २ तक ख्याति हो गई।

एक दिब रटन करते हुए एक महात्मा भी वहां आए और भली प्रकार महल देखकर उदास से हो गये।

राजा बोला-महाराज! उदास होनेकी क्या अवश्यक्ता है? इस महल में कोई दोष आपको नजर आया हो तो आज्ञा कीजिये, में दो चार हजार रुपया और लगाकर उसे दूर कर दूंगा।

महात्मा बोले-राजन! इस महल में दो बड़े भारी दोष है जो किसी प्रकार भी दूर नहीं हो सकते।

राजा ने कहा-वह दो कौन से हैं?

महात्मा बोले प्रथम दोष यह है कि एक दिन ऐसा

आयेगा जब कि यह महल गिर जायेगा । दूसरा दोष यह है कि इस महल के बनवाने वाला और इसमें रहने वाला भी एक दिन चल बसेगा ।

महात्मा के मुख से यह वचन सुनकर राजा का सब अहंकार जाता रहा और उसके मन में विवेक और वैराग्य का अंकुर प्रस्फुटित हो आया अतः उस महल में भगवानका मन्दिर बनवाकर स्वयं भी भगवान का भजन करने लगा इसलिये गुरू साहिब ने कहा है:—

जग रचना सब झूठ है जान लेहो रे मीत ।
कहु नानक थिर न रहे ज्यो बालू की भींत ॥१
जो उपज्यो सो बिनस है परो आज के काल ।
नानक हर गुण गायले छाड़ सगल जंजाल ॥२
प्राणी कछू न चेतई मद माया के अन्ध ।
कहु नानक बिन हर भजन परत ताहि जम फन्ध ॥३

सारंग कबीर जी.—

हरि बिन कौन सहाई मन का ।
मात पिता भाई सुत बनिता हित लागो सब फन का ॥
आगे को किछू तुलाह बाधो क्या भरवासा धन का ।
कहां विसासा इस भांडे का इतनक लागे ठच का ॥
सगल धरम पुन्य फल पावो धूर बांछो सब जन का ।
कहे कबीर सुनो रे सन्तो एह मन उडन पंखेरू बन का ॥

दृष्टान्त नं० २४

कहते है प्राचीन काल में किसी देश को ऐसी प्रथा थी कि जो राजा गद्दी पर बैठता था, दस वर्ष व्यतीत होने पर उसे गद्दी से उतार कर देश से बाहर (जलावतन)कर दिया जाता और एक ऐसे बन में छोड दिया जाता जहां उनके सुख आराम का कुछ भी साधन न होता और उसका शेष जीवन अत्यन्त दु:खमय व्यतोत होता था, इस प्रकार कई राजा हो गुजरे।

तब एक राजा ने गद्दी पर बैठते ही चित में सोचा यदि मेरी शेष समस्त आयु दु:खों में गुजरी तो इस दस वर्ष के सुख भोग से क्या लाभ ? मुझे इन सुख के दिनो में ही आगामी दु:ख के दिनो को दूर करनें का प्रयत्न करना चाहिये।

ऐसा विचार करके राजा ने प्रथम उस बन में बहुत से मजदूर भेजकर वहांके तमाम कांटेदार वृक्षोंको उखडवादिया और फिर बहुत से काश्तकारों, शिल्पियो और मालियो को आज्ञा दी कि वहां जाकर काश्त करो। बाग लगाओ सडके बनाओ, कार खाने लगाओं,मकान बनाओ और मेरे रहने के लिए भी सुन्दर महल तैयार करो। जिस २ चीज की आवश्यकता हो यहां से ले जाओ।

राजा की आज्ञा को पाकर सब लोग वहां पहुच गये और उसके आदेश अनुसार काम करने लगे। तब तो आठ नौ वर्ष के अन्दर २ वहां रौनक ही रौनक गई और एक स्वर्ग का दृश्य दिखाई देने लगा। दस वर्ष के व्यतीत होने पर राजा ने बडी प्रसन्नता से इस राज्य का त्याग कर दिया और वहां जाकर आन्नदसे अपंना जीवन व्यतीत करने लगा।

प्रिय आत्माओं! यही हाल हमारा भी है, हमने भी थोड़े दिन इस लोक में रह कर पुनः परलोक को चला जाना है। हमें भी अल्प दिनों के इस सुख भोंगो पर मोहित न होना चाहिये बल्कि आगामी परलोक के जीवन को इसी लोक में रहते हुए सुखमय बनाने का यत्न करना चाहिए।

सोरठ महल्ला ९

रे नर! एह साची जीअ धार।
सगल जगत है जैसे सुपनाँ विनसत लगत न वार॥
वारु भीत दनाइ रच पच रहत नहीं दिन चार।
तैसे ही एह सुख माया के उझरियों कहां गंवार॥
अजहूं समझ कछु विगरियों नाहिन भज ले नाम मुरार।
कहु नानक निज़ मत साघन को भखियों तोहि पुकार॥
जो यहां पैदा हुआ मर जायेगा इक दिन जरुर।

मौतके हाथों से बच जावे कोइ मुमकिन नहीं ॥१
हो कोई पुरअजगुनाह यां कि कोई हो बे कमूर।
मौंत तो हर एक को आयगी एक दिन जरुर ॥२
है अगर बन्दा प्रभु का तो सदा कर बन्दगी।
ले प्रभु का नाम तूं जब तक है तेरी जिन्दगी ॥३
साफ कर दिल को गुनाहों से रहें न गन्दगी।
ताकि उसके सामने तुझ को न हो शर्मिन्दगी ॥४

सराय दुनिया

सराय दुनियां है कूच की जा हर एक खोफ दमबदम है।
रहा सिकन्दर यहां न दारा रहा फरीदूं यहां न जम हैं ॥
मुसाफिराना टिके हो उट्ठो मुक़ामे फरदोस है अरम है।
सफर है दुश्वार खाब कब तक बहुत बड़ी मनजले अदम है ॥

'नसीम' जागो कमर को बांधो
उठाओ बिस्तर कि रात कम है॥

प्रिय सज्जनो ! महानुभाव महात्मा पुरुषों ने इस दुनियाको एक सराय (यात्रियों के ठहरने का स्थान) कहा है क्योंकि जिस तरह सराय में एक मुसाफिर आता है दूसरा चला जाता है। उसी प्रकार इस संसार की सराय में भी एक यात्री आता है दूसरा चला जाता स्थाई रूप से कोई भी टिकने नहीं पाता।

यहां रहने की मोहलत कोई कब पाता।
आता है अगर आज तो कल जाता है ॥१
करने हैं जो काम इनको जल्दी कर लों।
तल्बी का वह पयाम चला आता है ॥२

दृष्टान्त नं० २५

कहते हैं कि एक महात्मा कही यात्रा कों जा रहे थे रास्ते में रात्रि होगई, जान पहचान तो कोई थी नहीं, सामने एक राजा का महल आगया वह उसी ड्योढ़ी में सो गये

प्रात:काल जब राजा सैर को जाने के लिए बाहर निकला तो ड्योढ़ी में महात्मा को सोये हुए देखकर कुछ क्रोध से बोला-महात्मन्! तुम जानते नहीं कि यह महल किसका है ?

महात्मा बोले-हम तो यात्रा जा रहे थे रास्ते में रात्री होगई, जान पहचान तो थी नहीं अतः हम इसी सराय में आकर सोरहे ।

राजा कुछ और गुस्से से होकर बोला-महात्मा तूने मेरे इतने आलीशान[अति सुन्दर] महल को सराय कैसे कह दिया ।

महात्मा बोले राजन् ! सराय किसे कहते हैं ?

राजा ने कहा-सराय उसे कहते हैं जिसमें एक यात्री आवे और दूसरा चला जावे, स्थाई रूप से कोई भी रहने न पाये ।

महात्मा बोले-राजन् ! तुम्हारे से पूर्व इस महल में कौन रहता था ?

राजा ने कहा-मेरे से पूर्व मेरे पिता रहते थे ।

महात्मा बोले-तुम्हारे पिता से पूर्व कौन रहता था?

राजा ने कहा-मेरे पितामह रहते थे।

महात्मा बोले-वह अब कहां है ?

राजा ने कहा-महाराज! वह सब यहां से चल बसे

महात्मा बोले-राजन् ! क्या तुम सर्वदा इस महल में रहोगे ?

राजा ने कहा-महाराज! जब मेरे पूर्वज न रहे तो में कैसे रह सकूंगा।

महात्मा बोले-तुम न सही तुम्हारे पुत्र पौत्रे तो इस महल में सर्वदा रह हो सकेगें।

राजा ने कहा-महाराज ! भला यह कैसे हो सकता है भगवान का नियम तो सब के लिये एक सा ही हैं यहां कोई भी सदा के लिते नही ठहर सकता।

महात्मा बोले-राजन् ! फिर यह तुम्हारा महल एक सराय न हुआ तो क्या हुआ? जिसमें कोई भो स्थाई ठहरने नहीं पाता।

प्रिय बन्धुओं ! महात्मा जी के यह वचन मानो एक तीर थे जो सीधे जाकर राजा के हृदय को लगे। अज्ञान का पटल फटा और विवेक वैराग्य के नेत्र खुल गये। राजा ने प्रथम महात्मा जी के चरणो में गिर कर अपने अपराध की क्षमा मांगी और फिर सचमुच अपने उस महल को मुसा-

फिरो के रहने की सराय नियत कर दिया और स्वय मी उदासीन होकर धर्मा चरण करते हुए भगवान के भजन में अपना जीवन व्यतीत करने लगा ।

गजल

दुनियाँ नहीं है जायकयाय ऐ मुसाफिरो !
बांधो कमर को गठडी संभालो कि दिन चढा ।
आया था जो जहां पे सो आखिर चला गया ।
दो चार रोज रहके मुसाफिर चला गया ।
जैसे अकेले आया था वैसे चला है एक ॥
फरज दोंज़न के देखते आखिर चला गया ॥
दुनियां नही है जायकयाम ऐ मुसाफिरो ?
बांधो कमर को गठडी संभालो कि दिन चढा ॥

प्रिय आत्माओं ! यदि विचार से देखा जाए तो सौ सवा सौ वर्ष के अन्दर २ पूर्व समस्त जीव सृष्टि नाश होकर नई बन जाती है । आज से सौ सवा सौ पूर्व जो मनुष्य थे उनमें से आज कोई नही है और बालक युवा और वृद्ध मनुष्य वर्तमान में दृष्टिगोचर हो रहे हैं सौ सवासौ वर्ष के पश्चात इनमें से भी कोई न रहेगा । यही कारण है कि एक तत्ववेत्ता पुरुष को यह सप संसार शून्य शमशान ही दिखाई देता है ।

कमर बाँधे हुए चलने को यां सब यार बैठे हैं।
बहुत आगे गए बाकी जो हैं तय्यार बैठे हैं।
भला गर्दश फलक की चैन देती हैं किसे 'इनशा'
गनीमत है जो हम सूरत यहां दो चार बैठे हैं।
उठ जायेंगे खिलाड़ी सब एक एक करके।
चौंपट बिछी रहेगी बाजी बनी रहेगी॥
यह जमन यूं हो रहेगा और हजारों नाम वर।
अपनी २ बोलियां सब बोल कर उड़ जायेंगे॥

दृष्टान्त नं० २६

किसी मुसाफिर ने एक महात्मा से पूछा महाराज! बस्ती किधर है? महात्मा ने मरघट का रास्ता बताते हुए कहा बस्ती इधर है। जब मुसाफिर बताए हुए स्थान पर पहुँचा तो क्या देखा कि वह तो श्मशान-भूमि है।

परन्तु वापस आकर कहने लगा-वाह महाराज! क्या आप भी झूठ बोला करते हैं? मैंने आप से बस्ती का रास्ता पूछा था न कि मरघट का?

महात्मा बोले-भाई! उस के सब लोग यहां ही आ आकर बस रहे हैं, न मालूम कितनी बस्तियां यहां बस चुकी है, और कितनी आगे बसेगीं? इसलिए असली बस्ती यही है।

दृष्टान्त न० २७

कहते हैं एक चोर किसी फकीर की पगडी उतार कर नगर को भाग निकला। फकीर ने उसे बहुत ढूंढ़ा, परन्तु कहीं न मिला।

अन्त में फकीर दुःखी होकर मरघट में जा बैठा। तब किसी ने पूछा कि बाबा यहां क्यों बठे हो ?

फकीर ने उत्तर दिया मेरी पगड़ी चोर उतार कर भाग गया हैं इसलिये यहां बैठा हूं।

पूछने वालेने पूछा ! नगर मैं ढूंढ़ना था यहां बैठने से क्या लाभ ?

फकीर बोला-भाई ! उस नगर मैं मिला नहीं परन्तु इस नगर को छोड कर कहां चला जायगा ? यहां तो एक दिन आयगा।

फरीदा! गोर निमानी सडकरे निघरिया घर आओ।
सर पर मैथै आवना भरणहूं नां डरआहो ॥
फरीदा! कोठे मण्डप माढ़िया ओसारेंदे भी गये।
कूड़ा सौदा कर गये गोरी आये पये।
कबीर मरेगें मर जावेगें कोइ न लेगा नाम।
ऊजड जाये बसाएगें छोड बसन्ता गाम ॥
दिला ! गाफिल न हो इक दिन यह दुनिया छोड जाना हैं।
बगीचे छोड़कर खाली जमी अन्दर समाना है ॥

दृष्टांन्त नं० २८

कहते है एक बार बाबा फरीद जी कहीं जा रहे थे कि थोड़ी दूर सामने एक वेश्या का मकान आ गया क्या देखते हैं कि वह वेश्य एक छड़ी हाथमें लिये, जोर२से अपनी बांदी को पीट रही है और बांदी हाथ जोड़ कर बारम्बार प्रार्थना कर रही है कि हे मालिका ! एक बार मुझे क्षमा कर दे मैं पुन: ऐसी गलती कभी न करुगीं परन्तु वह वेश्या उसकी एक नहीं सुनती और वैसे ही पीटती जा रही हैं।

बाबा जी को यह दृश्य देखकर बहुत दु:ख हुआ और उसके पास जाकर बोले-माई! इस गरीब पर रहम कर इसमें भी तो तेरी तरह जान है।

प्रथम तो वेश्या ने उसकी बात पर ध्यान ही नहीं दिया और उसी प्रकार पीटती ही रही परन्तु जब बाबा जी ने दो तीन बार यही बात कही तब वेश्याने लापरवाही से कहा।

बाबा! तुम नही जानते यह बांदी बहुत बुरी है। मेरीं किसी आज्ञाका भी ठीक २ पालन नही करती कई दिन हुए मैंने इसे सुर्मा पीसने को दिया था और यह कहा था कि इस बिल्कुल बारीक पीसना किन्तु आज मैंने उस सुर्मे को अपने नेत्रो में डाला तो मेरे नेत्रो में चुभने लग गया क्योंकि इसने उसे बारीक नही पीसा अब तुम ही कहो इसे पीटूं न तो और क्या करु ?

वेश्या की इस बात को सुनकर और मनुष्य की वृथा अहंकार को स्मरण करते हुए बाबा जी के नेत्रों में अश्रु आगये और बोले-माई ! चार दिन के हुस्न और जवानी पर इस कदर गरूर नहीं करना चाहिए क्योंकि यह ढलती छाया की तरह है स्थिर रहने वाली नहीं है ।

झपकी जरा आंख जवाना गुजर गई ।
बदली की छाओं थी इधर आई उधर गई।१
रहती नहीं बहारें जवाना तमाम उमर ।
मानिंदे बूंए गुल इधर आई उधर गई ॥२
चार दिन के हुस्न पर इस कदर नादां ! गरूर
यूं हो ढलता जाएगा जैसे कि बढ़ता जाए ॥३
हसीनो को कहो ! नाजां न हों हुस्ने दो रोजा पर ।
खजांमें बैठकर रोया करेंगे इन बहारों को ॥४
जाके ऐ वादेसवा ! यही कहना गुलगुलेजार से ।
कि खजां के दिन भी करीब हैं नलगाइयो दिल तुमबहार से
उड़ेगा इक जरा सी देर में रंगे चमन देखो
न फूलो फूल कर फूलो यह बुलबुल की दुहाई है ॥६
चल अकड़कर नबैठ तनकर ऐसैफ! दिलमें ख्याल कर तू
जाने तुझसे करोड़ों बन्दे बनांके लुकमा चबा लिए हैं॥७
आदमी का जिस्म क्या है जिसपे शैदा है जहां ।
एक मिट्टी की इमारत एक मिट्टी का मकां ॥

चूना गारा खून इसमें ईटें इसमें हड्डिया ।
चन्द श्वांसो पर खडा है यह ख्याली आसमां।।

मौतकी पुरजोर आंधी इसमे जब टकरायेगी ।
देख लेना यह इमारत टूटकर गिर जायेगी।।

इस तरह बाबा फरीदजी ने उस वेश्याको बहुत उपदेश दिया परन्तु हुस्न और जावनी के मदमें मस्त हुई उस वेश्या ने सब कुछ सुनते हुऐ भी अनसूना कर दिया । क्योंकि कहा

यौवन धन अविवेक प्रभुता चारों परम रिपु ।
देत अनर्थ इक एक जेंहि चारों तेंहि क्या कथा ।।१
मद होश हैं नशे में जवानी के वह उन्हें ।
अपनी खबर नहीं तो हमारी तो खबर कहा ?।।२

अस्तु-थोड़े ही दिनो बाद बाबा फरीदजी का कब्रस्तान की ओर जाना हो गया और उनके पैरो के साथ कोइ चीज टकरा गई देखकर बोले ओहो ! यह किस बदनसीब की खोपडी हैं? जिसे मरने के बाद पृथ्वीने भी अपने अदर जगह ही दो, यों ही पैरो की ठोकरे खा रही है । आप बोले:—

निराला है तूं ऐ मौला ! निराली है तेरी बाते ।
किसीको संगमरमर दे किसी कौ पांवों वा लाते ।।१

गौडी कवीर जी

जिहिं सिर रच पचे बांधत पाग ।
सो सिर चुन्च सवारहि काग ॥
इस तन धन को क्या गरबईया ।
राग नाम काहे न दृढ़ईया ॥
कहत 'कबीर' सुन हो मन मेरे ।
इही हवाल होहिंगे तेरे ॥
फरीदा! मैं भोलावा पग्गदा मत मैली होई जाय ।
गहिला रुह ना जानई जो सिर भी मिट्टी खाय ॥
कबीर! हाड़ जरे ज्यों लाकरी केस जरे ज्यों घास ।
एह जग जरता देख के भयो कबीर उदास ॥
कबीर ! गरब कीजिए ऊंचा देख अवास ।
आज काल भुई लेटना ऊपर जामै घास ॥

पूछने पर पता चला कि यह खोपडो उसी बदनसीब वेश्या की है जो एक दिन अपनी बांदी को केवल इसलिये पीटती हुई बस न करती थी कि इसने सुर्मा बारीक क्यो नहीं पीसा जो कि आखों में चुभ रहा है ।

परन्तु अब यह वही आंखे हैं । जिनमें पंछियों नेअपना घोसला बना कर उसे बीठों (विष्ठा) से गंन्दा कर रखा है। तब तो आप से रहा न गया और आप अश्रु बहते हुए बोले:—

फरीदा ! जिन्ह लोइण जग मोहिया से लोइण मैं डिट्ठ ॥
कज्जल रेख न सहंदिया से पंखी हुए बहिट्ठ ॥

अर्थ— बाबा फरीद जी कथन करते हैं कि पहले जिन नेत्रों ने संसार को मोहित कर रखा था और सुर्मा के जरा से मोटेपन को सहन न कर सकते थे उन्हीं नेत्रों की फिर मैंने वही दशा भी देखी कि उनमें पंछियों ने अण्डे देकर उन्हें बीठों से गन्दा कर रखा है ।

इतिहास

जब सिकन्दर ने क्षमा कर कह दिया मैं हूं खुदा ।
वक्त पर पड़ने कजा के सब लगे होने जुदा ॥१
सब मूलक यूनान के हिकमतगरों से यूं कहा ।
ऐ तबीबो ! इस वक्त है मौत की कोई दवा ॥२
अपनी रैयत अरु वजीरों बेगमों से यूं कहा ।
है कोई मुझको बचाने के लिए अहलेवफा ॥३
ढेर दौलत का लगाकर हाथ में लेकर कहा ।
वास्ते तेरे मैं दुनिया में सितम करता रहा ॥४
थी तवक्को मुझ से भारी देगी मेरा साथ तूं ।
तुझसे ही गर हो सके तो आज ले जझको बचा ॥५
चलते चलते यूं लगे कहने जनाजे पर मेरे ।
हाथ खाली हो कफन से बाहर है मेरी रजा ॥६
और सिकन्दर का जनाजा कूचे कूचे में फिरे ।

ताकि सबको बाखबर कर दें यह आखर का समां ॥७

और सिकन्दर के जनाजे को उठायें सब तबीब ।
गंज भी हो बेगमें भी संग हो सारी सिपाह ॥८

करने वालों ने मुताबिक हुक्म के वैसा किया ।
देखनें वालों ने भी देखा उसको भी बर मिला ॥९

जिसका वह लखतेजिगर था रोके यूं कहने लगी ।
ऐ सिकन्दर ऐ सिकन्दर ! वह मुहब्बत मत भुला॥१०

जिसको तू रोती है बुढ़िया ! वह सिकन्दर कौन हैं ?
होगये लाखों सिकन्द्रर इस जहां मैं बादशाह ॥११

गजल

पानी का बुलबुला हैं इन्सा की जिन्दगानी ।
आवोहवा व पानो की इतनीं कदर दानी ॥
क्या उपका हो भरोसा जो शै हो आनी जानी ।
दुनिया है खुद भी फानी हर चीज इसकी फानो ॥
कुछ देर की हवा पर ठहरा हुआ है पानी ॥
पानो का बुलबुला है इन्सा की जिन्दगानी ॥१

इन्सान का भरोसा क्या जीस्त और बका पर ।
बेबस है यह घड़ो पर लाचार है कजा पर ॥
मिट्टी का है ये पुतला क्या नाज दस्तोपा पर ।
दारोमदार इसका आब और हवा पर ॥
पानी का बुलबुला है इन्सां की जिन्दगानी ॥

पानी के बुलबुलों में पानी था थोडा थोड़ा ।
जीने से हाथ उठाया मरने से मुंह न मोड़ा ॥
मिट्टी में मिल गया था आबो हवा का जोड़ा ।
इक मौज से बनाया और दूसरी ने तोड़ा ॥
पानी का बुलबुला है इन्सा की जिन्दगानी ।३
जीते हैं दिल लगी पर मरते हैं बेबसी पर ।
हिरसो खुद ही हो रहें हैं तय्यार खुदकशी पर ।
हिरसो हवा कुछ ऐसे हावी हें आदमी पर ॥
करते हैं तेरा मेंरा दो दिन की जिन्दगी पर ॥
पानी का बुलबुला हैं इन्सां को जिन्दगानीं ।४
चलने की फिकर करलो दुनियांमें नाम करलो ॥
मनजल भी सामने हैं थोड़ा कयाम करलो ।
एकान्त जा के बैठो और राम राम करलो ॥
आये हो जिस लिये तुम जल्दी वह काम करलो ।
पानी का बुलबुला है इन्सां की जिन्दगानी ॥ ५

:—हरि ओ३म् तत्सत्—:

जगत में देखी झूठी प्रीति

देव गन्धारी महल्ला नं० ६

जगत में झूठी देखी प्रीति ।
अपने ही सुख स्यो सब लागे क्या दारा क्या मीत ।
मेरो मेरो समै कहत हैं हित स्यों बांध्यों चीत ।
अन्त काल संगी नह कोऊ एह अचरज है रीत ।
मन मूरख अजहुँ न समझत सिख दै हारियो नीत ।
नानक भौजल पार परै जो गावे प्रभु के गीत ।
जगत में झूठी देखी प्रीति ।

दृष्टांत नं० २६

एक लड़का नित्य ही रात्रि को महात्मा जी के पास सत्संग सुनने जाया करता था । मता पिताको विचार हुआ कहीं यह साधु न हो जाये । अतः उसका विवाह कर दिया और आने वाली बहू को समझाया कि तुम अपने प्रेम द्वारा इसको वश करके महात्मा जी के पास जाने से हटा लो । ऐसा हो करने पर एक दिन उसने अपने पति से कहा कि मैं आपका वियोग सहन नहीं कर सकता । जब रात्रि को

आप सत्संग सुनने चले जाते हैं तो मेरा दिल धड़कने लग जाता। माता पिता ने भी समझाया ! कि बेटा वहां न जाया करो क्योंकि तुम अकेले ही तो हमारें पुत्र हो, हम तुम्हारा वियोग सहन नही कर सकते।

इस प्रकार सबके वर्जित करने पर लड़के ने महात्मा के पास जाना छोड़ दिया। एक दिन अकस्मात परस्पर उनकी भेंट होगई, तब महात्मा जी ने पूछा बेटा ! क्या कारण है जो अब तुम सत्संग सुनने को नहीं आते

लड़के ने कहा महाराज ! क्या बताऊं ? मेरे घर वाले मेरा पल भर का भी वियोग सहन नही कर सकते। फिर उनको छोड़ कर कैसे आ सकता हूँ ?

महात्मा बोले बेटा ! उन सबको अपने स्वार्थ से प्रेम है, वास्तव में तेरे साथ किसी का प्रेम नहीं।

लड़का बोला महाराज ! मुझे आपकी बात पर कैसे विश्वास हो ? महात्मा जी ने उसेश्वांस चढ़ाने और उतारने की विधी समझाई हुई थी। बोले तुम एक काम करना, प्रातःकाल ही घर वालों से कहना कि मेरा दिल घटता जा रहा, राम जाने मुझे क्या हो गया है ऐसे कहकर लेट जाना और श्वांस चढ़ा लेना। फिर हम आकर तुम्हें सब प्रेम की परीक्षा करा देंगे।

दूसरे दिन प्रातःकाल लड़के ने ऐसा ही किया। तब

तो सब घबराये कि इसे क्या हो गया ? लडके ने भी थोडी देर हाय २ करके फिर बोना बन्द कर दिया और चादर तान श्वांस चढ़ाकर लेट रहा। थोडी देर बाद जब घरवालों ने नबज देखी, तो बन्द थी। बस फिर क्या था सब रोने पीटने लग गये और पडौसी भी इकट्ठे हो गये।

इतने में महात्मा जी भीं आ पहुँचे और प्रथम उसकी नबज देख कर बोले-अभी इसके प्राण सूक्ष्म गति से चल रहे हैं फिर हाथ की रेखाओं को देखकर कहा-परन्तु इसकी आयु समाप्त हो चुकी है। हां, एक उपाय है।' जल्दी से दूध लाओं।

दूध का गिलास आ गया। महात्मा जी ने दूध पर कुछ मंत्र पढ़कर फूंक मारी और फिर तोन बार लड़के के शरीर पर घुमाकर बोले-लो, तुममैं से जो कोई भी इसको पी लेगा, उसकीं आयु इसको मिल जायेगी यह जोवित हो जायेगा और दूध पोने वाला मर जायेगा।

अब तो सबको अपनी अपनी फिकर पडगई। महात्मा जी ने सर्व प्रथम उस दूध को पोने के लिये उसके पिता से कहा। परन्तु वह बोला-महाराज! मैं इसे पोतो लेता मगर मेरी अभी दो लड़किया शेष है, उनका विवाह कौन करेगा ?

तब महात्मा जी ने लडके को मातासे कहा तुम ही इसे पीलो तुम तो दुनियाँ का सब कुछ देख चुकी हो।

उसने कहा-महाराज मेरा पति अभी जीवित है, यह तो मरने वाला मर गया। परमात्मा हमें लड़का और देगा।

तब महात्मा जी ने उसकी दो बहिनों से कहा तुम्हारा अकेला ही भाई है। यदि तुम में एक इस दूध को पी ले तो बहन भाई जोड़ी बनी रहेगी।

उन्होंने कहा-महाराज ! जब मरने वाली मर गई, तब पीछे जोड़ी बनी रहने से उसे क्या लाभ ? आप मरे जग प्रलय।

तब महात्मा जी ने उनकी स्त्री से कहा-बेटा यह लड़का तेरा पति था। तू इसका पल भर का भी वियोग सहन नहीं कर सकती। तेरा जीवन इसके बिना सर्वथा निष्फल है तू ही इस दूध को पी ले।

उसने कहा-महाराज ! मेरे माता पिता के घर किसी बात की कमी नहीं मैं उनके यहां जाकर अपने दिन आराम से गुजार लूंगी मुझे इस के लिए मरने की क्या जरूरत है?

इस प्रकार जब सब घर वालों ने कोरा जवाब दे दिया तब महात्मा जी पास खड़े हुए लोगों से बोले यदि तुम में से कोई इस लड़के का मित्र हो और इससे स्नेह रखता हो तो वह ही इस दूध को पी लेवे।

तब उन्होंने उत्तर दिया महाराज ! जब उसके घरवाले

सगे सम्बन्धी इस दूध को नहीं पीते तो फिर हमें क्या बिपत्ति पड़ी है जो हम इसको पीवें ?

तब महात्मा जी बोले यदि मैं दूध को पी लूं तो फिर इस पर सब लोग उनके चरणों पर गिरकर कहने लगे महाराज ! महात्मा तों परोपकारी होते हैं परोपकाय: सतां विभूतय: महापुरुषों की विभूतियां परोपकार के लिए ही होती हैं। फिर आपको रोने वाला कोई नहीं हैं आप ही कृपा कर इस दूध कों पी लींजिए।

तब महात्मा जी ने इस दूध को पीं लिया और लड़के के शरीर पर हाथ फेर कर बोले बेटा ! उठ खड़ा हो।

लड़का राम-राम कहता हुआ उठ खड़ा हुआ। तब महात्मा जी उन सब से बोले- लो अब मैं थोड़ी देर में मरने वाला हूँ। तुम अपने दूध को न पीने का सब वृतान्त मेरे जीते जीं लड़के कह सुनाओ हो पडा।

इस बात को सुनकर प्रथम तो सब झिझके परन्तु अन्त में सब हाल सुनाना ही पड़ा।

इस पर लड़के को विश्वास होगया कि यह सब सम्बन्धी अपने २ स्वार्थ के हैं। अतः उस दिन से वह किसी की परावाह न करके प्रतिदिन सत्संग में जाने लगा।

यह सुन सुन के मरना पड़ा हर किसी को
नहीं देखा मरते किसी पर किसी को ॥

देव गंधारी महल्ला ६

सब कछु जीवत को विवहार।
मात पिता भाई सुत बंधप अरु फुनि गृह की नार॥
तन ते प्राण होत जब न्यारे टेरत प्रेत पुकार।
आध घरी कोउ नह राखे घर ते देत निकार॥
मृग तृष्णा ज्यों जग रचना यह देखो रिदें बिचार।
कहु नानक भज राम नाम नित्त जाते होत उधार॥

दृष्टांन्त नं० ३०

सेठ धनी राम और भक्त गोपालदास एक नगर के रहने वाले थे। उनकी परस्पर अच्छी मैत्री थी वह दोनो एक ही पाठशाला में पढ़े थे। इस समय दोनों ग्रहस्थी और बाल बच्चे वाले थे। परन्तु दोनो के विचारोमें बहुत अन्तर था। गोपाल दास धार्मिक और सत्संगी पुरुष था। परन्तु धनिराम को कमाने, ऐश लुटने और परिवारिक पालने के अतिरिक्त अन्य किसी बात से वास्ता न था।

गोपालदास उसे भी अपने विचारों का बनाना चाहते थे और कभी२ उसे समझ या करते थे कि देखो भाई स्त्री,पुत्र धनादि संसार के पदार्थों में आसक्त न होना चाहिये क्योंकि एक न एक दिन इनको छोडना होगा। साथ जाने वाली वस्तु तो अपने शुभ कर्म और ईश्वर का भजन ही है।

परन्तु धनीराम उसकी इन बातो पर बिल्कुल ध्यान न

देता था । बल्कि कभी२ मखौल के तौर पर उससे कहने लगता ।

गोपालदास ! तुमने तो जवानीमें ही बुढापा बुलालिया है तिलक लगाना, माला फेरनी, सत्संग में जाना पीता पढ़नी यह सब वृद्ध अवस्था वालोके काम हैं । इन्हें अभी से अपना कर तुममें अपनी जवानी को घुन लगा लिया है ।

देखो! तुम्हारे घर में सुन्दर स्त्री हैं । बच्चे है भाई है बहिने हैं तुम उनसे प्यार करो। उनसे हसो खेलो खाओ पियो, और कभीं२ मेरे साथ थियेटर तमाशा भी देखने जाया करो । अरे दुनियां में आये हो तो चार दिन आनन्द से गुजार जाओ । लोग तो भोगों को ढूंढ़ते हैं और तुम उनको लाते मारते हो, तुम्हारी यह उल्टी समझ मुझको अच्छी नही लगती ।

ऐश कर दुनियां में गाफिल! जिन्दगानी है कहां ।
जिन्दगानी भी हो गर तो फिर जवानी है कहां ॥

गोपाल दास कहते-भाई! प्यार करने को मेरा चितभी चाहता है परन्तु मुझे तो सिवाय परमात्मा के और कोई अपना नजर नही आता । स्त्री,पुत्र,भाई,बहन सेबका स्वार्थ का प्यार हैं स्वार्थ के बिना कोई किसी को नही पूछता ।

सोरठ महल्ला ६

प्रीतम ! जान लेहो मन माहि

अपने सुख स्यों ही सब जग फाध्यो को काहूँ कों नाहिं ॥
सुख में आनबहुत मिल बैठत रहत चहुँ दिसी घेरें ।
विपत्ति पड़ी सब हो संग छड़ित कोऊ न आवत नेरें ॥
घर की नारि बहुत हित जा स्यों सदा रहत संग लागी ।
जब हो हंस तजी एह काया प्रेंत प्रेत कर भागी ॥
एह बिधि को ब्योहार बनयो हैं जा स्यों नेह लगायो ।
अन्त बार नानत बिन हरि जी कोऊ काम न आयो ॥

एह जग मीत न देख्यो कोई ।

सकल जगक अपने सुख लाग्यो दुःख में संग न होई ।
दारा मीत पूत सनबन्धी सगरे धन स्यों ही लागे ।
जब ही निर्धन देख्यो नर को संग छोड़ सब भागे ॥
कहूं कहा या मन बौरे को इन स्यों नेह लगायो ।
दीनानाथ सकल भय भञ्जन जस ताको बिसराओ ॥
सूआन पूंछ ज्यों भयो न सूधो बहुत जतन मैं कीनों ।
नानक लाज बिरद की राखों नाम तुम्हारो लीनों ॥

धनीराम ने कहा-रहने दो यार इन पुरानी बातों को यदि हम अपनी स्त्री पुत्रादि सम्बन्धियों से प्यार न करेंगे क्या पत्थरों से मुहब्बत का दम भरेंगे ? यही तुम्हारो खोटो प्रारब्ध की निशानी हैं, जोतुम्हें दुनियां से इतनो बदगुमानी है

भावार्थ यह कि इस प्रकार विचारों मे अन्तर होने पर भी उनकी परस्पर मैत्री थी और वह एक दूसरे का आन्तरिक हित चाहते थे।

कुछ समय पाकर गोपालदास का अपने परिवार समेत कहीं दूर देश में जाकर रहना हो गया जिससे कि दोनों की परस्पर जुदाई हो गई।

अब धनीराम का हाल सुनिए। उसका अपने परिवार में बहुत मोह था। अतः उसने अपनी समस्त सम्पत्ति अपने दोनों बच्चों का बराबर बांट दी। उसने यही सोचा कि सब परिवार मेरा न आज्ञाकारी है फिर क्यों अपने जाते जी इनकी वस्तु इनको सौंप दी जाय। मेरी सेवा तो होती ही रहेगी।

ऐसा करने के पश्चात् जब तक धनीराम बाहर से धन कमाकर लाते रहे, तब तक उनकी सेवा और मान प्रतिष्ठा होती रही।

परन्तु शरीर सदा बलवान नहीं रहता। अब धनीराम वृद्ध हो चुके हैं। धन उपार्जन नहीं कर सकते। घरवालों ने भी समझ लिया कि अब इनके हाथ कुछ कहीं रहा अतः उनके बर्ताव में भी परिवर्तन होने लगा।

कुछ दिन तो एसे ही गुजर गए आखिर लड़कों ने एक दिन कहा बाबा! देखो हमे आज तंग आकर कहना ही पड़ा

है, तुन्हें तो शरम नही आती सारा दिन घर के अन्दर ही बैठे रहते हो तुम्हारी नूहो ने कुछ काम भी करना होता है वह सारा दिन घूंघट निकाले रहें अथवा कोई काम भी करें?

धनीराम ने कहा-बेटो! खफा क्यों होते हो? तुम भीं मेरे हो नूहें भी मेरी है। तुम जैसा कहो मैं वैसा ही करने को तैयार हूँ।

लड़कोने कहा-बाबा! हमने क्या कहना है। तुम इतनी कृपा करो कि ड्योढोमें लाठी लेकर बैठे रहो और किसी कुत्ते बिल्ली को घर में न आने दिया करो। अब और तो तुम्हारे से कुछ हो नही पाता।

धनीराम ने कहा-सत्वचन बेटो!

लालाजी को ड्योढी में बैठे और कुत्तों को हटाते अभी थोडे ही दिन हुऐ थे कि एक दिन लड़को ने फिर कहा बाबा! तुझे मालूम ही होगा कि अब दीपमाला आने वाली है। सब लोग अपने२ घरों की सफाई और लिपाई पुताई करेंगे। अगर तू कहे तो हम भी कुछ करलें और यदि तूने बलगम ही फेंक२ कर दीवारों और सीमेंण्टके फर्मको लगाना हो तो हम चुप रहें।

धनीरामने कहा-बेटा! तुम सफाई करो, लिपाई पुताई करो मैं तुमको कब मना करता हूँ? लडको ने कहा अच्छा यदि मना नही करते तो आज से तुम्हारा आसब पशु बांधने

वाले कोठे में कर दिया । एक तो वहां एकान्त है, राम२ करते रहना दूसरे कच्ची जगह है जहां मन चांहे बलगम फैंकते रहना और कुछ न कुछ रात को पशुओं काभो ख्याल रखना ।

धनीराम अब कह भी क्या सकता था यदि कुछ कहता भी तो घर के सब लोग उस पर टूट पड़ते । इसलिये बोला बेटो ! जेसे तुम कहो, मैं वैसे करने को तय्यार हूं ।

अब उसका आसन माल वाले कोठे में हो गया और वह वहां पडा हुआ मृत्यु के दिन पूरे करने लगा ।

इधर आज पूरे बीस वर्ष व्यतीत होने पर गोपालदास का पुनः अपने नगर में आना हो गया और उसने यही सोचा कि मैं पहले अपने पुराने मित्र धनिराम से मिल आंऊ । राम जाने उसका शरीर में भी या नहीं ।

पहुंच गए उस मोहल्लेमें जहां धनीरामका घर था। परन्तु अब वहां का दृश्य कुछ और ही पाया देखा कि बड़ा आली-शान महल बना हुआ है और वह मकान जिसको गोपालदास देखा गया था वहां नहीं है ।

इतने में एक आदमी सामने वाले घर से निकला । गोपालदास नें उससे पूछा-भाई यहां सेठ धनींराम जी रहा करते थे ।

उसने कहां-सेठ धनीराम का नाम तो हमने सुना नहीं

हां! धनियां २ नाम का एक बूढ़ा यहा रहता है और यह घर उसी के लडको का है। देखो आंगन में उसी के दोनों पोंते खेल रहें है। आप उनसे पता कर सकते हैं।

गोपाल दास ने आगे बढ़कर पूछा-बच्चों! तुम्हारे बाबा लाला धनीरामजी कहां हैं? उन्होने आंखे मटकाते हुए नजाकत से कहा-लाला धनीराम हमारा कोई बाबा नही! धनिया तो माल वाले कोठे में पड़ा।

आह! किसी ने ठीक कहा है:—

'माया तेरे तीन नाम-परसी, परसा, परसराम।'

शेअर

बहुत बदते है और रिश्ते जबकि पैसे पास होते है।
टूट जाते हैं गरीबी में जो रिश्ते खास होते है॥

गोपालदासने कुछ और आगे बढ़कर देखा तो उसे माल वाले कोठे में मनुष्य आकृति वाली कोई वस्तु दिखाई दी, बड़ी भयानक। मैले कुचेले फटे पुराने जिसके वस्त्र है स्नान किए राम जाने कितने दिन हो गए होगें? जहां तहां बलगम पडी हुई है। तमाम शरीर पर मक्खियें भिनभिना रही है बदन में हड्डियोंके सिवाय और कुछ दिखाई नहीं देता दुर्गन्ध से दम घुटता जा रहा है।

गोपालदास को निश्चय हो गया कि हैं तो मेरे मित्र धनीराम ही, अतःबोले-कहिए लाला धनीरामजी! कुशल तोहैं?

धनीरामने कहा-भय्या क्यों मखौल करते हो? कभी धनीराम भी था, अब तो धनीया हूं देखो भाई ! देखे हुओ को दुखाना अच्छा नहीं होता। गोपालदास ने कहा लाला जी ! मैं मखौल नहीं करता, मैं हूं आपका पुराना मित्र गोपाल दास।

इतना कहने और सुनने की देर थी कि दोनो एक दूसरे के गले मिलाकर रोने लगे और ऐसे रोये कि नेत्रोंसे आश्रुओं की नदी बह निकली।

अन्त में गोपाल दास ने धीरज बांधते हुए कहा, मित्र! तुम्हारी यह दशा क्यों ? तुम्हें इतना दुःख किसने दिया ?

धनीराम ने कहा-भाई ? यह सब आपकी बाते को न सुनने का परिणाम है। मैंने मोह मे आकर अपना सब धन लड़को को दे दिया। जब तक मैं कमाकर लाता रहा सब मेरा मान करते रहे, जब न कमा सका तब उन्होंने मुझे इस दशा को पहुँचा दिया। मेरी दुर्गति करने वाला परिवार ही है। दुसरा कोई नहीं कहो भाई तुम्हारा क्या हाल हैं ?

गोपालदास ने कहा-मेरे यहां तो सब आनन्द मंगल है। मैंने सब अपने हाथ मे रखा हुआ हैं। जिसका फल यह है कि सब मेरा पानी भरते है। मैं तो अधिक समय अब सत्संग और ईश्वर भजन में ही व्यतीत करता हूं। क्योंकि मैं अच्छी तरह जानता हुं कि दुनियां सब कोई अपने

मतलब का यार है।

रोना तो है इसी का जो कोई नहीं किसी का।
दुनिया है और मतलब, मतलब हैं और अपना॥

गोपालदास ने धनीराम को कान में कुछ बात समझाई और उसके दूसरे दिन एक बड़ी भारी लोहे का पेटी जिसे बड़ा मजबूत ताला लगा हुआ, उठवा कर ले आये और सबके समक्ष धनीराम के पास रखते हुये बोला-सेठ जी ! अपनी अमानत (धरोहर) सम्भालिए। धनीराम ने कहा– आपका धन्यबाद रख दीजिए। पुन:गोपाल दास ने उन लड़कों से कहा भाई ! कुछ बुद्धी से काम लो भला जिनके पिता राजा हों, उनके पुत्रो को भी दुकान या नौकरी करने की आवश्यकता हुआ करती है जितनी तुम दूसरों की खुशामद करते हो यदि उसके कुछ अंश में भी पिता को करो तो तुम्हारे पौत्रों तक धन कमाने की कुछ जरूरत न रहे।

अब तो सबको विश्वास होगया कि इस पेटी में कोई कीमती माल अवश्य है अत: लगे बढ़ चढ़ कर पिता की सेवा करने घर में सबसे अच्छे और हवादार कमरे में सेठ जी का आसन लगा दिया गया। नापित (नाई) प्रतिदिन सेवा में आने लगा, कपड़े दिन में दो बारी बदले जाने लगे सेठ जी साहिब को बहुएं भी गरम २ और नरम २ परांठे पका २ कर खिलाने लगीं, अब तो सेठ जी का कुछ दिनों

में रंग बदल गया और गोपालदास का मन ही मन में धन्यबाद करने लगे। कवि ने ठीक कहा है.—

बुढ़ापा नाम है जिसका है अफसुर्दगी दिल की।
जवानी जिसकी कहते हैं तबियत की जवानी है॥

इस प्रकार धनीराम ने अपनें जीवन के शेष दिन बड़े आनन्द से गुजारे और जब समय पाकर उनका शरीर शान्त हो गया। तब बड़ी आन शान के साथ उनका दाह संस्कार किया गया।

दूसरे दिन जब पेटी का ताला खोलनें का वक्त आया तो दोनों भाईयों का परस्पर विवाद होगया। हर एक यही कहता था कि मैंने सेवा अधिक की है अतः मुझे अधिक भाग मिलना चाहिए।

तब पड़ोस वालों ने समझाया कि तुम व्यर्थ झगड़ा न करो। हमारे सामने पेटी को खोलो और जो कुछ भी निकले उसे आधा २ बांट लो।

लोहार को बुलाकर ताला तोड़ा गया जब पेटी का ढकना उठाकर देखा तो उसमें पत्थर कंकर ही भरे हुएदिखाई दिए। वह उन्हें निकाल २ कर बाहर फैंकने लगे तब नीचे राख की तह जमी हुई दिखाई दी उन्होंनें सोचा सम्भवतः इसी में लाल निकल आवें क्योंकि लाल राख में ही छिपाए जाते हैं। आखर तमाम राख को छान मारा परन्तु उसके

अन्दर से एक फूटी कोड़ी भी न निकली ।

तब दोनो लड़के एक२ मुट्ठी राख की अपने सिर में डालते हुए बोले-बुड्ढे ने हमारे साथ कैसा धोका करा उनकी स्त्रियां भी सेवा करने के कारण रोती हुई कहने लगी-बुड्ढा कैसा निकला ।

तब सब लोग हंसने लगे और अपने मन ही मन में कहने लगे-जो हुआ बहुत अच्छा हुआ । ऐसो के साथ होना ही चाहिए ।

भावार्थ यह है स्त्री, पुत्र, भाई, बन्धु सब स्वार्थ के रिश्ते है । अतः बुद्धिमान मनुष्य को इनके मोह न आकर अपनी लव परमात्मा में ही लगाए रखनी चाहिए ।

सहजो ! भज हरिनाम को तजो जगत स्यों नेह ।
अपना तों कोई नहीं अपनी सगीं न देह ॥
तूं मत जान बाँबरे ! मेरा है सब कोय ।
प्राण पिंड से वंध रहा सो नही तेरा होय ॥
एसा संगी को नहीं जैसा जीव और देह ।
चलते समय रे मना ड़ार चला कर खेह ॥
तन सराय मन पाहरू मनसा उतरी आय ।
कोई काहूँ की नही सब देखी ठोक बजाय ॥

- हरि ओ३म् तत्सत *-*

जागना है तो जागो

तिलङ्ग महल्ला ९
चेतना है तो चेत ले निशदिन में प्राणी ।
छिन२औध बिहात है फूटे घट ज्यों पानी ॥
हरि गुण काहें न गावहि मूरख अज्ञाना ।
झूठे लालच लाग के नह मरन पछानां ॥
आजहूं कछु बिगरयो नहीं जो प्रभु गुण गावे ।
कहू नानक तिह भजन ते निर भै पद पावे ॥

प्रिय सज्जनो ! प्रभु भजन और सत्संग करना चाहिये इस बातको प्रायः सभी आस्तिक पुरुष मानते है मगर फिर भी वह इस ओर ध्यान देते नहीं देखे जाते है इसका कारण जब उनसे पूछा जाता है तो वह वह उत्तर देते है कि हमारा चित्त भी चाहता है कि हम ईश्वर चिन्तन और सत्संग करें परन्तु क्या करें! दुनियां दारी के कामो में कुछ ऐसे उलझे हुए हैंकि इधर आने की फुर्सत ही नही मिल पातीं । उन सज्जनों की सेवा में हम एक दृष्टांन्त पेश करते हैं ।

दृष्टान्त नं० ३१

एक वैद्यजी बहुत ही धार्मिक बुद्धि के व्यक्ति थे । वह

सबको भगवत् रूप समझ कर औषधि करते थे और शेष समय सत्संग करते तथा ईश्वर व्यतीत करते थे ।

उसके एक मित्र थे जो कि उनसे बहुत स्नेह रखते थे परन्तु अहर्निश मायावी कार्यों में ही लिप्त रहते थे यद्यपि बैद्यजी उन्हें कई बार समझा चुके थे कि कुछ समय सत्संग और ईश्वर चिन्तन में भी लगाया करो परन्तु उन्हें यही उत्तर दिया करते थे कि मुझे घरेलू धन्धों से ही फुर्सत नहीं मिलती जब २ यह पूरे हो जायेंगे तब भजन सत्संग भी कर लूंगा ।

एक दिन वर्षा हो रही थी और तालाब में मेंढक टर टर कर रहे थे इतने में उनके मित्र भी उनके पास आगये । वैद्यजी ने उनसे कहा भैया ! तालाब में जाकर इस मटकी में पांच सेर के लगभग मेंढक पकड़ कर लाओ परन्तु देखना कोई मर न जाय ।

यह सज्जन तालाब पर गए और युक्ति पूर्वक मेंढकों को मटकी में डालने लगे जब समझे कि काफी होगये हैं तो उन्हें लेकर वैद्यजी के समीप आगए ।
वैद्य जी के पास तराजू पड़ा था बोले अच्छा भाई कृपा करके इन्हें पनसेरी भर तोल दो ।

मित्र ने एक पलड़े में पन सेरी का बट्टा रखा और दूसरे पलड़े में मटकी वाले मेंढकों को उलट दिया ।

मेंढक ज्यों ही पलड़े में गिरे त्यों ही कूद२ कर बाहर जाने लगे। यह उनको पकड़२ कर पलड़े में रखते इतनेमें पलड़े वाले मेंढ़क कूदकर बाहर निकल जाते, इस तरह वह सब कमरे में उछलते दिखाई देने लगे।

इधर वैद्यजी कह रहे थे मित्र! इतनी देर क्यो लगाई है और भी काम करने हैं।

मित्र हैरान रह गया, और पनसेरी भर मेंढ़कोंको तोल न सका। उसे इसी काममें रात्री होगई और खानेका समय भी जाता रहा। अन्त में वैद्य जी से बोले-श्रीमान जी! यह मेंढ़कों की तोल मेरे से तोली नहीं जायगी।

तब वैद्य जी ने उन्हें अपने पास बैठा कर प्रेम से कहा देखो भाई! दुनियां के धंधे भी कभीं पूरे नहीं हो सकते। जिस प्रकार मेंढ़क पलड़े से इधर उधर उछलते जाते हैं' बारबार पकड़ने परभी काबूमें नहीं आते उसी प्रकार मनुष्य जब अनाजका प्रबन्ध करता है, तब लकडी खत्म हो जाती है जब लकडी लाकर रखता है तब कपडो की आवश्यक्ता महसूस होती है। जब कपड़े लाता हैं तब घी समाप्त हो जाता है। इसके साथ ही साथ आज लड़की का विवाह हैं तो कल लड़के की सगाई हैं। आज कोई पैदा हुआ है तो कल कोई मर गया हैं। इसी हेर फेर में मनुष्य की आयु समाप्त हो जाती है परन्तु यह गोरखधंधा सुलझने में नहीं आता।

मनुष्य इन मायावी पदार्थोंकी तोल अपनी इच्छा के अनुसार कभी पूरी तोल नहीं सकता।

जिस प्रकार आज मेंढकोंकी तौल में आप भूखे रह गऐ और आपके सोने का समय आ गया परन्तु वह तोल पूरी न हो सकी, इसी प्रकार मनुष्य भी माया की तोल के अन्दर से भूखा ही जाता है और मृत्यु का समय आ जाता है।

विचार करो! हमारे पिता, पितामह सब इसी मायकी तोल को पूरा करनेमें लगे रहें। परन्तु वह तोल को पूरा न कर सके। भाई! कामोंको किसीनें पूरा नहीं किया काम ही सबको पूरा कर देते है। किसान खेतोको, बनिया व्यापार को, नौकर नौकरी को नहीं कर पाते, वह खेती, व्यापार और नौकरी ही उनको पुरा कर देती है।

'धन्धा किसे न साध्या सब धन्धे साधीं।'

भोगा न भुक्ता वयमेव भुक्तास्तपो न तप्तं वय मेव तप्ताः।
कालो न यातोवयमेव यातास्तृष्णा नजीर्णा वयमेवजीर्णाः॥

अर्थ—आश्चर्य है मनुष्य भोगों की तरफ दौड रहा है और मृत्यु मनुष्य की ओर दौड़ रही है सौदा हो रहा हैं, उमर की नकदी दी जा रही है ओर संसार के भोग खरीदे जा रहें है।

खुदाकी याद की फुर्सत कहां मिलती है बन्दो को।
संभाले कौन दुनियांमें भला दुनियां के धन्धो को॥

तुम्हें शबाश ऐ दुनियाके धंधो तुमनें छोडा कब -
तुम्हें यक्सां है तिफली नोजवानी और पीरी सब ॥

पंजाबी बैंत

नहो मुक्कने कम्म जहान वाले तूयो मुक्कदा२ मुक्क जासे ।
दम २ अन्दर नेड़े मौत दे तूं आकर ढुक्कदा२ ढुक्क जासे ॥
मंदे कम्भ दे करन तों रुक्कदा नहो अंत रूक्कदा२ रुक्का जासे ।
अज वक्त है रामदे सिमरणे दा नहीतां उमक्कदा२ उक्कजासे ॥

अभी तो भगवान की तरफ से लापरवोह होकर मनुष्य कह देता हैं कि दुनियां के धंधे तो करलूँ फुर्सत मिलने पर भगवान को भी याद करलूंगा यादरख जब तुझे भगवान की जरुरत पड़ेगी और तूं पुकार करेगा-तब वह भी तेरी अर्जीको सबसे नीचे रख देगा तेरी बारीही नहीं आयेगी अनैंक योनियो में दुःख पाता रहैंगा । जब भगवान को फुर्सत मिलेगी तब तेरी तरफ ध्यान देगा ।

वैद्यजी नें कहा-मित्र ! इसलिये मैं आपसे कहता हूं कि-

शेअर

जब तलक हैं जिन्दगी फुरसत न होगीं काम से ।
कुछ समय ऐसा निकालो प्रेंम करलो राम से ॥

मित्र ने वैद्य जी का धन्यवाद किया और उस दिन से नियमपूर्वक सत्संग और प्रभु चिन्तन करने लगा ।

प्रिय बंधुओं ! दूसरे कुछ सज्जन ऐसे है जो यह कहते

हैं, कि हम वृद्धावस्था में भजन सत्संग करेंगे अभी तो जवानी है कुछ दिन संसार का आनन्द ले लेना चाहिए।

उन सज्जनों की सेवा में हमारा यह निवेदन हैं कि भाई जो कुछ भी हो सकता है वह युववस्था में ही हो सकता है बाल्यावस्था में तो विवेक नहीं होता और वृद्धावस्था में इन्द्रियां तेहार जाती हैं फिर तो वही बात होगी।

नयनों नीर बहें तन खीनां भए केश दुधवानी।
रुधा कंठ शब्द नहीं उचरे अब क्या करे प्राणी॥

महाराज श्री भर्तृहरि जी लिखते हैं:—

सवैया

निज देह अरोग सभोग लखो न पिखो जब तोक समीप जरा
गुणमों शक्ति जब लौं लगता दरशों न हती जो सभी उमरा।
निज श्रेय निमित्त अमित्त अरो पुरुषार्थ को सुनरो उचरा
जरते गृह कारण कूप खने वह उद्यम तों अध कूप परा॥

दोहा

जरा उपाय न हो सके जरा आयु के माहिं।
भवसागर के तरणको तरुण अवस्था आहिं॥

शेयर

जवानी में अदम के वास्ते सामान कर गाफिल!
मुसाफिर शबसे उठते हैं जो ज़ाना दूर होता है॥

दृष्टान्त न० ३२

किसी मन्दिर में एक महात्मा जो कथा किया करते थे। एक लड़का उनके पास कथा सुनने के लिए सबसे प्रथम आता और सबसे पीछे जाता था।

एक दिन महात्मा जो ने प्यार से कहा-बेटा! क्या बात है जो तूं इस छोटी अवस्था में सत्संग और प्रभु के भजन में इतना अनुराग रखता है ?

लड़के ने हाथ जोड़कर कहा महाराज एक दिन की बात है माता जी ने मुझे पानी गर्म करने की आज्ञा दी परन्तु जब मैं लकड़ियो को जलाने लगा तो वह जले नहीं। इस पर माता जी ने कहा बेटा ! नीचे छोटी लकड़ियां रखकर ऊपर बड़ी जोड़ दो और फिर अग्नि सुलगाओ क्योंकि छोटो लकड़ियों को पहले अग्नि लगा करती है।

महाराज ! मैंने वैसा ही किया, तो क्या देखा ? कि सचमुच छोंटी २ लकड़ियां झट जल गई और बड़ी बाद में कब मैंने विचार किया कि काल भगवान का भी तो कोई पता नहीं कब आजाए ? इसलिए मुझे अभी से ही सत्संग और भजन पाठमें तत्पर होजानाचहिए महाराज!यही कारण है जो मैं आपके चरणों में सबसे पहले आता और सबके बाद मैं जाता हूँ। क्योंकि मैं काल भगवान को हर समय

अपनें सन्मुख खडा देखता हूं। महात्मा जी लड़के को इस बुद्धिमत्त को देखकर बहुत प्रसन्न हुये कहा भी हैं:—

दोहा

नही बालक नही जोबनें नही विरद्धी कछु बंन्द ।
ओह वेला नहीं बूझिये जब आय परे जम फंद ॥
हने हंत पुनि हनेगो ऊत्तम मध्यम मंद ।
गनें सरोवर सर्व को ताते ताको बंद ।
हम जाने थे खायेगें बहुं जमीं बहु माल ।
ज्यों का त्यों ही रह गया पकड़ ले गया काल ।३
दो बातों को भूल मत जो चाहत कल्याण ।
'नारायण' इक मोंत को दूजे श्री भगवान ॥४

दृष्टांन्त नं० ३३

कहते है एक सुथरे शाह रोटीपका रहा था और साथही साथ खाए भी जा रहा था।

किसी ने कहा - भाई! यह क्या कर रहें हो? इतनी जल्दी क्या पडी है ? पहले सब रोटियां पकालो, फिर शांति से बैठकर खा भी लेना।

तब सुथरे शाह बोला:—

अक्ख फरकनी न मिले मुख में रहे ग्रास ।
लक्ख लानत सुथरिया ! जो दम दा करें विसास ॥२

भाई ! क्या पता हैं कि सब रोटियां पक चुकने तक मैं

जीवित भी रहूं अथवा न रहूँ? क्योंकि स्वसों का तो कोई भरोसा नही। बाहर गया हुआ दम यदि लौटकर अंदर आ गया तो आदम है वरना नादम है। इसलिये मैं साथ ही साथ खाए जारहा हूं ताकि कही मेंरा किया कराया परिश्रम निष्फल न हो जाए।

स्वांस २ हरि नाम जप वृथा स्वांस मत खोय।
क्या जानो जो अंन्त का यही स्वांस ही होय॥

गजल

गुजरा नही बरस यह तुम खुब गुजार रहे हो।
इक साल घट गया है समझो न बढ़ रहे हो॥
बचपन का अहद सारा खेलोमें हीं गुजारा।
होकर जवान उलटे तुम काम कर रहे हो।
रंजो महिन उठाए पकडी मगर न इबरत।
यूं खाके ठौकरे भी दुनियाँ पे मर रहें हो।
काम आनें वाली दौलत समझो ऐमाल अपनें।
क्या जोड२ कर पैसा पैसे पे धर रहे हो॥४
पूरे हुए न होंगे धन्धे कभी जहां के।
किस धुनमें जिन्दगी यह बरबाद कर रहे हो।
मालिक से मुह चुराए दुनियां से दिल लग ये।
फिर सूझे यह तो क्योंकर किस राहपे पड़ रहे हो॥६
'विश्वासी' यादेहक से गफलत होश्यार रहना।

सौदा नहीं नफे का नुकसान कर रहे हो ॥७

सवैया

जीवन व्यर्थ बिताओ नहीं
दिन आ रहे हैं विरुधापन के।
अन्त में काम न आवे कछु
धन धाम आराम वहाँ तनके ॥
केवल ईश की भक्ति करो
तजिके छल छन्द सवैं मनके ॥१
मृत्यु को नेरे सदा समझो
मद में रहो मस्त न जोबन के।
क्षण भंगुर जीवन की कलिका
कल प्रातःको जाने खिली न खिली।
पग धूरी सुसज्जन साधुन की
बड़े भाग से जान मिली न मिली ॥
तुलसी विषया रस की मदिरा
पिये जीव की होश खुली न खुली।
जपले हरि नाम अरि रसना
फिर अन्तकी बार हिली न हिली ॥२

कवित्त

मोह मद द्वेष को निकाल मन मन्दिर से
संयम विशेष साध ज्ञान को वढ़ाऊंगा।

आस अभिलाष छोड़ विश्व से स्नेह तोड़े
मोड़ मन मूढ़ को सुमार्ग में लऊंगा ॥
गाऊंगा नवीन राग आनन्द अपार भरा
प्रेम के प्रवाह में अथाह गोते खाउंगा ॥
राम नाम रट मैं पढूंगा भक्ति पथ बीच
नीच विषय छोड ईश रूप बन जाऊंगा ॥३

॥ हरिओ३म् तत्सत् ॥

दुःख का कारण-ममता

रुबाई

है मैंहर ! बाग में खड़ा है नीलोफर ।
पत्ते नहीं होते मगर पानी पानी से तर ।।
तूं भी दुनियां में रह तो इस तरह रह ।
रंगे वाबस्तगी न आय दिल पर ।।

प्रिय सज्जनों ! संसार में दुःख का कारण अपने शरीर और संसार के समस्त पदार्थों में, ममता या आसक्ति ही है इसलिए भगवान ने गीता के अध्याय १३ श्लोक ९ में कहा है:—

असक्तिरनभिष्वंगः पुत्रदार गृहारिषु ।
नित्यं च समचित्तत्व मिष्टानिष्ढोपपत्तिषु ।।

अर्थात देह और इन्द्रियों में आत्म अभिमान न करके पुत्र, पुत्री और कुटुम्ब के दुःख से आपको दुःखो न जानना और नित्य समचित रहकर इष्ट अनिष्ट की प्राप्ती में एक रस रहना चाहिए।

दृष्टान्त नं० ३४

जब श्री व्यास जी ने अपने पुत्र शुकदेव जी को राजा जनक जी के पास उपदेश देने के निमित्त भेजा, तो शुकदेव

जी ने राजा जनक के द्वार पर जाकर अपने आने की सूचना दी' तब राजा जनक जी ने उनको अपने पास बुला लिया।

अन्दर जाकर वह क्या देखते हैं कि स्वर्ण सिंहासन पर राजा विराजमान हैं सेवा के लिए रानी, दासी और नौकर खड़े हैं। संसार के भोग विलास की समस्त सामग्री उनके पास उपस्थित हैं तब शुकदेव जी के मन में संशय उत्पन्न हुआ कि जो राजा स्वयं संसार के पदार्थों में इतना व्याप्त हो रहा है, वह मुझ जन्म के त्यागी कों क्या उपदेश दे सकता है ?

इतने में ही एक नौकर चिल्लाता हुआ राजा के पास जाकर कहने लगा महाराजा ! सम्पूर्ण मिथलापुरी में आग लग गई है और वह अपने महल तक भी पहुँच चुकी है। यदि कोई रोक थाम हो सकती हो तो कर दीजिये।

यह सुनकर राजा जनकजी तो उसी प्रकार बैठे रहे परन्तु शुकदेव जी झट बोल उठे-महाराज! महल के दरवाजे पर मेरा चिप्पी और डन्डा धरा है, मैं उसे उठा लाऊं कहीं वह न जल जाये।

तब महाराजा जनक उपदेश करते हुए बोले !

श्लोंक- अनन्ततत्तु ने वित्तं अनवन्नास्ति किंचन।
मिथिलायां प्रदग्धायां न में दह्याति किंचन ॥

अर्थात-मेरा आत्मा रूपी धन अनन्त है, (उसका कभी

नाश नहीं हो सकता) और अन्त वाले धन को मैं धन ही नहीं मानवता इसलिये इस जलती हुई मिथलापुरी में मेरा कुछ भी नही जल सकता ।

तब शुकदेव जी को ज्ञान हुआ कि 'केवल घर छोड़ने मात्र से ही कोई त्यागी नही हो सकता । जिसके अन्दर ममता और आसक्ति का अभाव है वहा सच्चा त्यागी है ।

श्लोक-संसार बीज मन एवं विद्धि नपुत्र भार्या द्रविणादिकहि
संसारनाशो मनसो क्षयेन न तद्‌ गृस्थाश्रम बर्जनेन

अर्थात-संसारका बीज (मूल कारण) मनको ही समझना चाहिये । स्त्री, पुत्र धनादिक संसार का कारण नहीं है मन के लय होने से (अर्थात मन के पदार्थोंकी असक्ति का अभाव हो जाने से) संसार का नाश हो जाता है (अर्थात वह बंधन और दु:ख का हेतु नही बनता) केवल गृहस्थाश्रम का त्याग करने से संसार का त्याग नही होता ।

छोड़कर घर बार किस लिए बैंठे ।
दूर दिल से जो न हुई ममता ।।
तो रमाने से विभूति क्या होगा ?
जो हुआ मन न राम में रमता ॥१

श्रीमद्‌भगवद्‌गीता अध्याय ३ श्लोक ६ और ७—
कर्मेंद्रियाणि संयम्य य आस्ते मनसा स्मरन् ।
इन्द्रियार्थन्विमुत्मा मिथ्याचारः स उच्यते ।।

यस्त्विन्द्रियाणि मनसा नियम्यारभतेऽर्जुन ।
कर्मेन्द्रियैः कर्मयोगमसक्तः स विशिष्यते ॥

अर्थ–जो मूढ बुद्धि पुरुष कर्मेन्द्रियोंको हठ से रोककर इन्द्रियों के भोगो को मन से चिन्तन करता रहता है वह मिथ्या चारी अर्थात दम्भी कहा जाता है।

परन्तु हैं अर्जुन ! पुरुष मन से इन्द्रियों को वशमें करके अनासक्त हुआ, जो कर्मेंद्रियों से कर्म योग का आचरण करता है वह श्रेष्ठ है।

श्री केशव कवि ने क्या सुन्दर कहा है:—

कहे 'केशव' भीतर जोग जगै इत बाहिर भोग मयी तन दे ।
इन हाथ भयो जिनके तिनके बनही घर है घर ही बन है ॥

बहुत देरकी बात है, कि एकबार रवि नदीके समीप लाहौर शहर में हमारा ठहरना हुआ सांयकाल ६बजे के बाद हम रवी के तट पर कुछ समय बैठा करते थे और लगभग आठ बजे वापस लौट आते थे।

एक दिन पूज्य गुरूदेवजी किसी कारण वश शहर में ही ठहर गए और में अकेला ही उधरको चल निकला।उसदिन कुछ देर भी होगयी थी रात भी अंधेरी थी कोई दूसरा आदमी भी नजर न आताथा। एकदम सुनसान सी छारही थी। मैं इधर-उधर घुमने लगा। तब मुझे एक आदमी बैठा दिख ई दिया जो परमात्माके ध्यान में लीन था। मैं भी उसके पास

ही थोड़ी दूरी पर बैठ गया और दिल में विचार किया वापसी पर इसके साथ ही चलेंगे और कोई बातचीत करेंगे।

जब वह ध्यान से निवृत्त हुआ तो स्वयं ही मेरे पास आकर बोला महात्मा जी ! आप रात्री को यहां क्यों आए हैं यह जगह अच्छी नहीं है यहां कई घटनायें हो चुकी हैं यदि आपका ख्याल सैर करने को हो तो जरा दिन रहते गये और शाम होते ही चले गये।

मैंने कहा-आज हमें स्वाभाविक हो कुछ देर हो गई है शायद जल्दी ही चले जाते परन्तु आपको देखकर बैठ गए साथ मिलकर चलेंगे और बातचीत भी करेंगे।

उसने कहा-अच्छा अब चलें रात अधिक हो गई है हम दोनों उसी समय शहर की ओर चल दिए। बातों २ में उसने बताया कि मैं एक साधारण व्यक्ति हूं मुद्दत से मैंने अपना दिल दुनियां को दे रखा था और ममता के हाथों बुरी तरह पायमाल था आखिर मालिक ने दया की और तात्लुकात(परस्पर सम्बन्ध) की जंजीरे धीरे २ सब टूट गई तीन लड़के थे वह भी मर गए और उनकी माता थी वह भी चल बसी कारोबार था वह भी जाता रहा और यार मित्र थे वह भी काफूर हो गये।

अब कुछ समय से यहां एक दुकानदार के पास नौकरी करता हूँ। भोजन के अतिरिक्त १६ रुपये मासिक वेतन मिल

जाता है बस यही मेरे निर्वाह की सूरत है और मैं इतने में ही प्रसन्न हूं। दिन मैं ६ घण्टे काम करता हूँ, और बाकी समय परमात्मा की याद में गुजारता हूं न किसी का लेना न किसी का देना, अधिक मेल मिलाप से हो मैं घबराता हूं। मुझको यहां रहते ६ वर्ष हो गये हैं, परन्तु बहुत थोड़े लाग मुझे जानते हैं और मैं इसे अपने अहोभाग्य समझता हूं।

मैंने कहा-तब तो आपको बहुत दुःख रहता होगा। वह बोले-कहां का दुःख और कहा का सुख ? जो दम गुजरे सो वाहवाह:—

सैर दुनियाँ की दमबदम कीजे
किसी की शादी व किसका गम कीजे।
जाने वाले चले हो जायेंगे
किस लिए चश्म गम से गम कीजे॥

जो हुआ सो अच्छा जो होगा सो वाहवाह। चिन्ता चित्त से दूर है, रंजों गम काफूर है—

जो कुछ करते हैं भगवान उसी में हैं सच्चा कल्याण।

मैंने पूछा क्या आपको अपने दिवंगत प्यारों को याद कभी नहीं सताती ? वह बोले—

एक वृछ डालाँ घनो पंछो बैठे पाय।
पोह फटी पीली भई उड़ २ चहुँदिशि जाय॥

अर्थ-जैसे एक वृक्ष की डालियो पर रात व्यतीत करने

के लिए बहुत से पक्षी आकर बैठ जाते हैं और पाह फटते अर्थात प्रकाश होते ही चारों दिशाओं को उड २ कर चले जाते है इसी प्रकार परिवार रूपी वृक्ष की डालियों पर सम्बन्धी रूपी पक्षी कर्मभोग रूपी रात्री व्यतीत करते है और कर्मभोग की समाप्ति रूप प्रभात के होने पर सब अपनी २ राह पकडते है फिर याद किसीकी सताए ? क्योंकि:—

कबीर ! पानी केरा बुलबुला इस मानुष की जात ।
देखत ही छिप जाएगे ज्यों तारा प्रभात ॥२

कबीर ! आज काल के बीच में जंगल होगा बास ।
ऊपर तेरे हल चले ढोर चरेगें घास ।३

मैंने कहा-आप ऐसे वैराग्य और उदसीनता के वचन बोलते हैं इसी से मालूम होता है कि आप दुखी रहते है । वह बोला-महात्मा जी ! वैराग्य और उदसीनता का यह अर्थ नहीं है कि मैं दु:खी रहता हूं किन्तु इसका भाव यह है कि मैं संसार की ओर से वेताल्लुक बेपरवाह और बेख्याल रहता हुआ सदा ही अपनी मस्ती में रहता हूं ।

मैंने कहा तो क्या आपका कोई मित्र नहीं हैं ? वह हैरान होकर बोले-कौन मित्र और किसकी मित्र ? सब अपने २ स्वार्थ के साथी हैं कोई किसी का मित्र नहीं मैंने सब जमाना छान मारा परन्तु मुझे तो कोई सच्चा साथी मिला नहीं । खुशरू और खुशपाश (सुन्दर मुख वाले और

सुन्दर वस्त्र पहनने वाले) तो अवश्य मिले परन्तु वफादार (अंग पालने वाला)कोई न मिला यदि आपको कोई मिला हो तो मुझे भी उसका पता निशान बताये मैं भी जाकर उसके चरण चूमूं ।

बैंता पंजाबी

आज कल जमाने दे यार बिगड़े
वक्त आ गया बड़े अन्धेरे वाला ।
पहलों लांव्दे ते पिछो तोड जान्दे
पिछा भेड़ दा अग्गा शेर वाला ।
पहलो मिठियां २ करन गल्लां
पिछो कम्म ओही मेर तेर वाला ।
परमानन्द ! जमाना उल्ट होया
रंगसेव दा ते जायका बेर वाला ।

कोई मरहम नही मिलता जहां में
जिसे हाले दिल कहदूं अपनी जबामें ।
नही मिलता साथी इसो वास्ते ही
मैं चुप बैठा रहता हूँ अपने मकां में ॥२

मैंने कहा-यह ठीक हैं परन्तु इस तरह का एकान्त वास भी तो आपको बवाल(दु:ख दायक)हा प्रतीत होता होगा ?

वह बोले-बवाल काहे का ? जब मैं संसारमें आया था तो अकेला ही आया था, जब अ उंगा तो अकेलाही जाउगा ।

इस बातपर मुझे पूरा २ विश्वास है, फिर बवाल काहे का हां यदि किसी को साथ लाया होता या किसी को साथ ले जाना होता तो यह एकान्त अवश्य बवाल होती परन्तु जब आना जाना अकेले ही है तो फिर मध्यकाल मैं इसका गिला और शिकायत कैसी ? खुदगर्ज मतलब परस्त और बेबफ दुनियांदारो कीसंगत से तो अकेला रहना ही अच्छा हैं।

जायगा जब यहां से कुछ भी न पास होगा
दो गज कफन का टुकडा तेरा लिबास होगा।१
कोई न साथ आए कोई न साथ जाए।
दो दिन की जिन्दगीमें करले जो दिलमैं आए।२
यह हाट बाट तेरा यह आन बान तेरो
रह जाएगी यहां पर यह सारो शान तेरी।३
अकेला ही आया जगमें जायगा भी अकेला।
दो दिन की जिन्दगी मैं क्या देखता हैं मेला।४
चलना है रहना नही चलना विससे बीस।
सहजो !तनिक सुहाग पर कौन गुन्दावे सीस।५
जीव काठ की पुतलियां करमो रूपी तार।
ईश्वर खूब नचावता प्रारब्ध के अनुसार।६
'पूर्व जन्म के मिले संगयोगीमात पिता धीया'

मैंने कहा-क्या आप महापुरुषों की इस युक्ति में कोई दृष्टांन्त पेश कर सकते हैं ? वह बोले-क्यों नही ?सुनिये-

दृष्टांत नं० ३५

एक साहुकार की संतान जीवत न रहती थी, उसके यहाँ कई बच्चे पैदा हुए पुरन्तु कोई ५ कोई १० और कोई १५ वर्ष जीवित रहकर मर गये। इस कारण से दम्पति बहुत दु:खी थे अन्त मे उन्होंने एक महात्मा जी के पास जाकर अपना खेद प्रकट किया।

महात्मा जी कुछ शक्ति वाले थे उन्होंने कुछ देर ध्यान में स्थित होकर पुन: नेत्र खोले और कहा-भाई! जो कुछ हो रहा है सो ठीक ही हो रहा है परन्तु यदि आगामी पैदा होने वाली संतान को जन्म लेते ही मेरे पास ले आओ और मेरे द्वारा किए जाने वाले वर्ताव में कोई दखल न करो तो मैं तुम्हारी भविष्य में होने वाली सन्तान के जीवित रहने का कोई उपाय कर सकता हूँ और तुम्हें अभीसे कहे देता हूं कि आज से चार वर्ष बाद जो लडका पैदा होगा वह अवश्य दीर्घायु होगा। दम्पति ने महात्मा जी की बातको स्वीकार किया और नमस्कार करके अपने घर को चले गये।

नौ मास के पश्चात उनके यहां एक लड़की पैदा हुई, जिसे वह तुरन्त ही महात्माजी के पास ले आए। महात्माजी ने उनसे चार गज खद्दरका कपडा मंगवाया और उसमें उस लडकी को लपेट कर अपनी कुटियाके पास ही दफना दिया

यही वर्ताव उन्होंने आगामी पैदा होने वाले दो और

लड़को के साथ भी किया। दम्पति महात्माजी के इसवर्ताव से बहुत दुखी हुये परन्तु वचन दे चुके थे अब कर भी क्या सकते थे ?

इसी प्रकार जब वह चौथे बच्चे को लेकर वह आये तो महात्माजी बोले-चूंकि तुमको मेरा वर्ताव पसन्द नहीं है इसलिए, जाओ इस बच्चे को ले जाओ, यह जीवित रहेगा और दीर्घायु होगा।

तब कहीं उनकी जानमें जान आई परन्तु पूछे बिना रह न सके कि आपने हमारे पहले तीन बच्चोके साथ ऐसा बुरा वर्ताव क्यों किया ?

महात्मा बोले-धीरज करो! रात्री आने दो यह भेद भो तुम पर खुल जायेगा।

जब आधी रात हुई तो महात्माजो की कुटिया के पास तीन बच्चे (एक लड़की और दो लड़के) निकल कर खेलने लगे, उनमें एक लड़का बोला-इस महात्मा ने हमारे साथ ठीक बर्ताव नही किया जो चार २ गज खद्दर के टुकडो पर ही हमको टालता रहा। हमें तो इस साहूकार से बहुत धन लेना था। क्योंकि यह हमारा पूर्व जन्म का ऋणी है। यदि यह महात्मा बीच में न पड़ता तो हम स हूकार को और इसकी धर्मपत्नीको अच्छी तरह नाकों चने चबाते और इसका दिवाला निकाल कर फिर मरते परन्तु जो हुआ सो वाहवाह।

फिर सही कर्जा हम लेकर ही छोड़ेगें। इतना कहकर वह तीनो बालक अकस्मात् नेत्रों से छिप गए।

दम्पति ने अपमें नेत्रों से यह कौतुक देखा भी और कानों से सुना भी, इसलिए वह अपना सा मुह लेकर घर को चले आये।

इतनी बाते करने के पश्चात वह सज्जन चलते-२ रुक गये और बोले-महात्मा जी ! आज्ञा दीजिये, अब मैं विदा होता हूं।

मैंने बडी प्रसन्नता प्रदर्शित करते हुए उनका शुभ नाम पूछा और पुन: मिलने की इच्छा प्रकट की। परन्तु न तो उन्होंने अपना नाम ही बताया और न अपना पता ही दिया बोले-महात्माजी ! यह मिलाप भी स्वप्नके मिलापके सदृश ही समझिए और पुनः मेज मिलाप के झगड़ेको छोड़ दीजिए स्वप्न के पदार्थोंका अधिक परिचय प्राप्त करने से क्या लाभ और उससे अधिक सम्बन्ध भी क्या रखना ? जहां तक हो सके, बेताल्लुक और बेलाग रह जीवन के दिन व्यतीत करनें चाहिए, अपने शरीर के सहित संसारके किसी पदार्थ में भी आसक्ति अथवा मोह रखना उचित नहीं है।

इतना कहकर वह तो नमस्कार करके चलते बने और मेरे मुंह से अकस्मत् शब्द निकले।

क्या राजा क्या रंक है क्या तपी को मान ।
जिस पर प्रभु कृपा करे सो मूर्ति भगवान ।

उसके बाद कई बार हमारा रावी के तटपर जाना हुआ परन्तु उस महापुरुष के पुनः दर्शन प्राप्त न हो सके ।

।*। हरि ओ३म् ततसत् ।*।

आनन्द स्वरूप परमात्मा की खोज

भजन

रङ्ग ते तमाशे सारे कूड़े नी जहान दे ।
रत्तें नाल प्यारे जेहड़े सोई मौजा मान दे ॥टेक

छोड़ के आन्नद सच्चा हड चम बिहाजें कच्चा ।
सौदे बेईमान दे...रंग ते ...॥१

सोहना तेरी बुक्कल खेले वेखन जावे जंगल वेले ।
मारे अज्ञान दे...रंग ते...॥२

मुशक सोहनी अंदरों आवे झल्ला त्रल्ला भालन जावे ।
मिसल हैवान दे...रंग ते...॥३

अंदर तेरे सागर भरया पानी ढूंढे बाहरों अडया ।
कम्म खबतान दे ..रंग ते...॥४

तखत शाही छड आवे कंड़ेयां ते लेटन जावे ।
कारण दुःख पान दे...रंग ते...॥५

'गोबिन्द' तूं ही आप प्यारातलब तेरी पर्दा भारा ।
समझी नाल ध्यान दे...रंगते...।६

श्लोक

यस्त्वात्मरतिरेव स्यादात्मतृप्तश्च मानवः ।
आत्मन्येव च संतुष्टस्तस्य कार्यं न विद्यते ॥३,१७

वाह्य स्पर्शेष्व सक्तात्मा विन्दत्यात्मनि यत्सुखम् ।
स ब्रह्म योग युक्तात्मा सुखमक्षयमश्नुते ।।५, २१

अर्थ-जो मनुष्य आत्मा में प्रीति वाला, और आत्मा ही तृप्त तथा आत्मा में ही सन्तुष्टवान है उसके लिये कोई कर्तव्य नहीं हैं ।

और बाहर के विषयों में अर्थात सांसरिक भोगों में आसक्ति रहित अन्तःकरण वाला पुरुष अन्तःकरण में जो भगवान ध्यानजनति आनन्द है उसको प्राप्त होता है और वह पुरुष सच्चिदानन्दघन परब्रह्म परमात्मा रूप योग में एकी भाव से स्थित हुआ, अक्षय आनन्द को अनुभव करता है ।

धनासरी महल्ला ९

काहे रे मन खोजन जाई ।

सरब निवासी सदा अलेपा वोही संग समाई ।
पुष्प मध्य यों बास बसत है मुकर मांहि जैसे छाई ।
तैसे ही हरि बसे निरन्तर घटई खोजो भाई ।।
बाहिर भीतर एको जानो एह गुरू ज्ञान बताई ।
जन नानक बिन आपा चीनें मिटे न भ्रमकी काई ।

सज्जनों ! श्री मद्भगवद्गीता के इन श्लोकों में तथा श्री गुरू ग्रंथ साहिब के इस शब्द में, मनुष्य को अपने अन्त-रात्मा में ही परमात्मा को देखने और उसी में मग्न रहने को शिक्षा दी गई है । इस अंतरात्म को छोड़कर परमात्मा की

खोज में बाहर के पदार्थों की ओर दौड़ना, श्री गीता जो और श्री गुरू ग्रंथ साहिब के मतानुसार अज्ञान का ही सूचक है और है भो ठीक, क्योंकि जो चोज अपने घर में पड़ी है वह बाहर कैसे मिल सकती है।

दृष्टान्त न० ३६

संध्या के समय एक महिला अपने घरके आंगन में बैठी कुछ सिलाई कर रही थी। इसी बीचमें उसकी सुई कहीं गिर गई आंगन में कुछ अन्धेरा सा होगया था और बाहर सड़क पर बिजली का प्रकाश हो चुका था इसने सोचा सुई अंधेरे में तो मिलेगी नहीं जब भी मिलेगी प्रकाश में ही मिलेगी ऐसी सोचकर वह वह सुई को बाहर सड़क पर ढूंढने लग गई।

इतने में उनके पुरोहित एक पण्डितजी उधर से आ निकले और इसे देखकर बोले बहिन जो! क्या ढूंढ रही हो? उसने कहा पुरोहित जी! सुई ढूंढ रही हूं।

पण्डितजी भी सहानुभूति प्रकट करते कुछ झुक कर ढूंढने से लगे और साथ ही प्रश्न किया कि बहिन जी! क्या आपको कुछ स्थान का अनुमान है कि कितनी जगह के अंदर सुई खोई हैं।

तब वह महिला बोली-हां हां! मुझे भली प्रकार याद हैं कि सुई घर के आंगन में खोई है और कहीं नहीं।

तब पन्डितजी कहने लगे बहिन! तुम तो बड़ी भोली

भला खोई हों घर और खोज करने जाए सड़क पर। इस प्रकार वह कैसे मिलेगी ? सैकड़ों वर्ष ढूंढते रहने पर भी नहीं मिल सकती।

तब महिला बोली पंडित जी ! क्या करूं ? घर में अंधेरा है और यहां प्रकाश है। भला खोई हुई सुई अंधेरे में कैसे मिल सकती है ?

तब पंडित जी ने समझाया कि तुम्हारी यह खोज गलत है। घर के अन्दर ही प्रकाश का प्रबन्ध करके उसे ढूंढना चाहिए क्योंकि खोई हुई वस्तु वहीं मिलेगी जहां वह खोई गई है। तब उसने वैसा ही किया। अपने अंदर आंगन में दिया जलाया और फिर उस दिए के प्रकाश में सुई को ढूंढने लगी और अंत में उसे पा लिया।

वस्तु कहीं ढूंढे कहीं किहि विधि आए हाथ।
कहें कबीर तब पाइये भेदी लाजे साथ।
भेदी लीन्हा साथ में दीनी वस्तु लखाय।
कोटि जंम का पंथ था पल में पहुँचा जाए।

यही हाल हममें से बहुतों की महिमा रूपी बुद्धी का है जिस प्रकार वह महिला सुई को खोज रही थी। उसी तरह हर एक प्राणी की बुद्धी सुई के समान सूक्ष्म सच्चिदानन्द परमातन की खोज पर हैं परन्तु वह सूक्ष्म सच्चिदानन्द परमात्मा है आंगन में पड़ी हुई सुई के समान हृदय में।

'ईश्वरः सर्व भूतानां, हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति'

अर्थ—हे अर्जुन ! वह परमात्मा सर्व प्राणी के हृदय देश में स्थित है । परन्तु यह बुद्धि खोज कर रही हैं लड़कके समान माया के बाहरी पदर्थों में तब वह इसे मिले तोभी कैसे ? न वह मिलता और न इसका ढूंढना ही बन्द होता है । इसीप्रकार बाहरी पदार्थोंमें खोज करते२जीवन समाप्त हो जाता है पर उसका पता ही नहीं मिलता वहां पता चले भी तो कैसे? क्योंकि वहां तो वह खोया ही नही ।

वह है हृदय में,पर हृदय में मोह(अज्ञान)का अंधेरा है अंधेरेके कारण वहाँ वह दिखाई तो नहीं देता जब जैसे अंधेरे दूर करने केलिए प्रकाशकी आवश्यकता है उसी प्रकार मोह (अज्ञान) को निवृत्ति के लिए विवेक (ज्ञान) की आवश्यक्ता क्योंकि 'होय विवेक' मोह भ्रम भागा' विवेक होने से मोह भ्रम दूर हो जाता है । और 'मोह सकल व्याधि कर मूला' वह ही सब दुःखो का मूल है । उस मोह का नाश विवेक द्वारा होता है और 'बिन संतसग विवेक न होई महापुरुषोंकी संगति के बिना मनुष्य को विवेक नहीं होता, अतएव सत्संग करना मुख्य कर्त्तव्य है । जिस तरह पंडितजी के द्वारा उस महिला को ज्ञान हुआ उसी प्रकार महान पुरुषो को संगति से जीव को विवेक होता है और विवेकसे मोह का पर्दा फट जाता है । जिससे सच्चिदानंद परमात्मा के दर्शन इसको

अपने हृदय में ही हो जाते हैं। तब यह बड़े उल्लास के साथ कहता है:—

शेअर

खाना ए दिल में छिपा था मुझे मालूम न था।
कब भला मुझसे जुदा था मुझे मालूम न था॥ १
कहीं तुझको न पाया हमने इक जहां देखा।
फिर आखिर दिल में ही पाया बगलमेंसेहीतू निकला॥२
दिल के आइना में है तस्वीरे यार।
जब जरा गर्दन झुकाई देख ली॥३
घूंघट के पट खोल तुझे पिया मिलेगें।

नई आई बहु जब तक मुंह पर कपड़ा किए रखती हैं तब तक उसे अपने पतिदेव के दर्शन नहीं हो सकते इसी प्रकार जब तक बुद्धि पर मोह का पर्दा है, तब तक उसे परमात्मा के दर्शन नहीं हो सकते। जब मोह का पर्दा हट जाता है तब उसे अपनें हृदय में ही पति परमात्मा मिल जाता है। श्री कबीर जी कहतें हैं:—

दोहा

घट का पर्दा खोल कर सन्मुख ले दीदार।
बाल सनेही सांईयाँ आदि अन्त का यार॥

अर्थ हृदय के पर्दे (मोह) को दूर कर (परमात्मा के)

अपने सामने ही दर्शन कर, वह बचपन का प्रेमी और आदि अंत का साथी तेरे पास ही है।

दृष्टान्त नं० ३७

एक कमरे में मकान मालिक बैठा हुआ था। सामने दीवार पर घड़ी लगी हुई थी। जो चलती हुई लगातार टक २ कर रही थी और वह इस आवाज को सुन रहा था।

इतने में गली में ढोल और बाजे बजने लगे जिससे इस सज्जन को घड़ी की आवाज सुनाई देनी बन्द हो गई इसने घबरा कर नौकर को बुलाया और कहा देखो तो भला! यह घड़ी चलनी बन्द होगई है क्या? इसकी आवाज क्यों नहीं आती?

नौकर ने समीप होकर घड़ी को देखा तो वह बराबर आवाज देती हुई चल रही थी, वह असली कारण को समझ कर बोला, बाबू जी! घड़ी बन्द नहीं हुई हैं परन्तु बाहर गली के ढोल धमाकों की आवाज ने इसकी आवाज को दबा लिया है जब वह बन्द हो जायेंगे तब इसकी टक टक फिर सुनाई देगी।

सज्जनो! मनुष्य का हृदय भी एक कमरा है। जिसमें परमात्मा रूपी घड़ी चलती हुई लगातार आवाज दे रही है परन्तु हमें सुनाई नहीं देती। इसका कारण यह है कि हमने बाहर जो कामनाओं और वासनाओं के ढोल बजा रखे हैं

उन्होंने इस आवाज को दबा लिया हैं। यदि उस आवाज को सचमुच सुनना चाहते हो तो बाहर इन्द्रियों द्वारा होने वाले शोर शराबे की बन्द करदो, परमात्मा की आवाज आपको सुनाई देगी और अवश्य देगी।

चश्म बदों गोश बदों लब बवन्द।
गर न बीनी राहे हक बर मखन्द॥

अर्थ– आंख कान और मुंह को बन्द करके (अंदर मन द्वारा सुमरन करो)फिर यदि तुम्हें परमात्मा न मिले तो मेरे पर हंसना अर्थात् हंसीं उड़ाना।

दोहा–आंख कान और नाक मूद नाम निरंजन ले।
अंदर के पट सब खुले बाहर के जब दे॥

श्लोक

योऽतः सुखोऽन्तरारामस्तथान्तर्ज्योतिरेव च।
स योगी ब्रह्मनिर्वाणं ब्रह्मभूतोऽधि गच्छति॥ गी० ५,२४

अर्थः– जो पुरुष निश्चय करके अन्तरात्मा में हो सुख वाला है और आत्मामें ही आराम वाला हैं तथा जो आत्मा में ही ज्ञान वाला है ऐसा वह सच्चिदानंद परब्रह्म परमात्मा के साथ एकी भाव हुआ योगी शांत ब्रह्म को प्राप्त होता हैं।

कवित्त

आप ही के घट में प्रगट परमेंश्वर हैं।

ताहिं छोड़ भूल नर दूर दूर जात हैं ।
कोई दौरे द्वारिका को कोई काशी जगन्नाथ ।
कोई दौरे मथुरा कोई हरिद्वार नहात है ।
कोई दौरे बद्रो को विखम पहाड़ चढ़ ।
कोई तो केदार जात मन मैं तुह्नात है ।
'सुन्दर' कहत गुरू दिए दिव्य नैन ।
हृदय आकाश माहिं प्रभुजु दिखात है ।

गजल

खुदा कहाँ है ? खुद अपने ही दिल से पूछ जरा ।
कहां है 'मिहर' तूं इस तरह ढूढंता फिरता ॥१
तुझे तलाश है जिसकी वह खुद तुझी में हैं ।
अकेला बैठ के कर आंख बन्द ध्यान लगा ॥२
देखने वाला तो उसी को कहते हैं ।
हो जिसने बातन में बरमिला देखा॥३

दृष्टान्त नं० ३८

एक योगीराज महात्मा के पास कोई एक सज्जन आकर कहने लगा महाराज ! मैं आनन्द और सुख की प्राप्ती के लिए संसार भर में घूमा परन्तु मुझे सच्चा सुख और शान्ती प्राप्त न हुई । कृपया आप हो बताइये कि अब मैं क्या करूं ?

महात्मा बोले-क्या तेरे को हम पर पूर्ण विश्वास है ?

क्या तूं हमारी बात को सत्य मानेगा ? उसने कहा जी हां महात्मा बोले यह जो सामने नदी है उसमें एक बड़ी मछली रहती हैं तुम पास जाकर यही प्रश्न करो कि वह तुम्हें इस प्रश्न का उत्तर देगी।

पहले तो इस सज्जन को यह बात कुछ आश्चर्य जनक प्रतीत हुई परन्तु विश्वास के आधार पर उधर चल दिए

इधर उसके वहां पहुँचने से पहले ही वह योगीराज महात्मा अपने योग बल से उस जल की मछली बनकर अठखेलिया लेने लगे। इतने में यह सज्जन भी वहां आकर क्या देखते हैं कि एक बड़ी मछली पानी के ऊपर नीचे आती जातीं घूम रही है।

यह सज्जन बोले–हे मत्स्य ! श्री स्वामी जी का भेजा हुआ मैं तेरे पास आया हूं, मेरा एक प्रश्न हैं वह यह है कि मैं आनन्दका प्यासा हूं वह कहां है और कैसे मिल सकता हैं।

मछली बोली–हे पुरुष ! मैं भी जल की प्यासी हूं। वह जल कहाॅं है और मुझे कैसे मिल सकता है ? यह बताने का कष्टकर ताकि अपनी प्यास बुझाकर मैं तेरे प्रश्न का उत्तर दे सकूं।

वह सज्जन बोला–अरी भोली भाली नादान मछली तूं जिस जलकी प्यासी है उसी जलमें ही तूं दिनरात रहती है अन्य जलके जीव तो कभी-२ जल से बाहर भी निकल आते

हैं, परन्तु तूं जल में ही पैदा हुई और जल में ही सदा से रह रही है और यह जलभी स्वच्छ मीठा तथा अगाध है परतु तेरे सीधे रहने पर यह तेरे मुख जाने नहीं पाता । तूं जरा उल्ट जा और जितना चाहे जल पीले,जलकी तेरे पास कमी नहीं, तेरे चारों ओर जल ही जल है ।

मछली बोली-अरी भोले भाले नादान मनुष्य ! यह तेरे ही प्रश्न का उत्तर तेरे ही मुख से निकल रहा हैं । यह बह कि जस प्रकार मैं जल की प्यासी हूँ उसी प्रकार तूं आनन्दका प्यासा है । जिस प्रकार जल में पैदा होकर उसीमैं रह रही हूं, उसी प्रकार तूं भी अनन्त आनन्द स्वरुप परमात्मा से उत्पन्न होकर उसी में रहता हुआ क्रीड़ा कर रहा है । जिस प्रकार तूं मुझे उल्ट जाने के लिए कह रहा है उसी प्रकार तूं भी नाम रुपी संसार की ओर से उल्ट कर उसके अंदर में रमे हुए अस्ति भांति प्रिय रुप ब्रह्म की ओर नजर करले अर्थात जिन माया के पदार्थो में तूं आनन्दको ढूंढ रहा है इधरसे अपनें मनको हटाकर परमात्मा की ओर लगा ले अर्थात् बहिर्मुल दृष्टि से अन्तर सुख दृष्टि कर ले बस तेरे चारो ओर आनन्द ही आनन्द है ।

इतना कहकर मछला केरूप में आए हुए वह योगीराज महात्मा अंतर्ध्यान हो गए और बह सज्जन भी इस संसारके पदार्थ से मोडकर परमात्मा में मग्न रहने लगा ।

'मोहे सुन सुन अ वे हासी पानी में मीन प्यासो ।

चौपाई

आनन्द सिण्धु मध्य तब बासा,

बिनु जाने कस मरत प्यासा

सुधा समुद्र समीप विहाई,

मृग जल निरखि मरहु कत धाई

दोहा

सब के घर कूप है सब कूपों में नीर

ता पर बैठे मर रहे प्यारे सकल शरीर ॥

श्री भर्तृ हरि जी ने भी अपने गुरुदेव श्री गोरखनाथ जी से यही प्रश्न किया था इसका जो उत्तर उन्होंने दिया उसे पंजाबी के शब्दों में एक कविने बहुत सुन्दर रीति से कहा है

सुनी बात गुरुदेव ने भार्तृ दी

विच अपने मन दे हस्या ई ।

पानी रूप है अपना आप तेरा

अभे गई प्यास न तस्या ई ॥

जन्म मरण है भरम दे भूत वांगू

भरम अपने नाल तूं फस्या ई ।

कोई वख न कख करतार बाहजो

आप आप अन्दर सदा वस्या ई ॥

लड़का बगल ते शहर दे विच रोला

हरिन मुश्क नूं भालने दस्या ई।
मंड़ खोल के वेख क्यों फिरें भुखा
तेरा लाल न किसे ने खुस्या ई॥
तेरे बाहज न वक्ख करतार किधरे
हीर पान नूं लक क्यो कस्या ई।
'धर्मदास' सांई वक्ख आप बाहजों
किसे वेखया न किसे दस्या ई॥

और भी कहा है—

दुरियां कुछर थक गए दुःख पाया भारा।
हत्थी आया कुछ न न चलया चारा॥१
बाज आई ओ भोल्या! तूं घुमाया सारा
पुर आनंद झात न पाइया जिथे ओह प्यारा॥२
नाफां तेरी नाफ विच तूं पता न पाया
मुंठा तेरी वगल विच ढढोरा शहर पिटाया॥३
छड तूं खोजा बाहर लिया हुन वेख तूं अन्दर
तेरे प्रीतम दे रहन दा है एही मंदिर॥४
मन अपनें नूं बस कर है एही बंदर
फिर खुले अन्दर दरस पा कहे मस्त कलंदर॥५
हुन न किधरे बाहर तूँ ऐवे ढूंढन जाई।
समय अमोल न अपना तूं अजां गवाई॥६

बैत

बाहर नठो न किधरे सज्जनों ओए
रब मिलदा नही जे कन्दरा विच ।
न ओह बैठदा गिरजे ते गुरुद्वारे
न हो मिलदा है मंदिरा मस्जिदा विच ।
ओह तां व्याप रहया जर्रे २ अंदर
बंन्द रहन्दा नहीं सज्जनां जदरां विच ।
नीवां सिर कर के जेहड़ा झात मारे
उस नूं दिसेगा सारेयां अँदरां विच ।
जेहड़ा समझ लेंदा एस रमज ताई
हुंदा ज्ञान दे नाल भर पूर सोई ।
प्रीतम ओस विच ओह है विच प्रीतम
इको नूर दा नूर हैं नूर सोई ।
अपने मन मे डूबा पा जा सुराग़े जिन्दगी
तूं अगर मेरा नहीं बनता,न अपना तो बन ।

—॥ हरि ओ३म् तत्सत् ॥—

माया का भुलावा

भजन

अपने को आप भूल के हैरान हो गया ।
मालके जाल में फंसा विरान हो गया ॥ टेक
जड देह को अपना स्वरूप मान मन लिया ।
दिनरात खानपान काम काज दिला दिया ॥
पानी में मिलके दूध एक जान हो गया । अपने
विषयों को देख देख के लालच में आ रहा ।
दीपक में ज्यों पतंग जाय के समा रहा ॥
बिना विचार के सदा नादाम हो गया । अपने
कर पुण्य पाप स्वर्ग नरक भोगता फिरे ।
तृष्णा की डोर में बंधा सदा जंम धरे ।
पीकर के मौह की सुरा वेभान होगया । अपपनें
सत्संग में जाकर सदा दिल में विचार ले ।
अंदर में अपने आप रूप को निहार ले ॥
ब्राह्मनंद मिले मोक्ष जभी ज्ञान हो गया । अपनें

चौपाई

सुनहु तात यह अकथ कहानी, समुझत बनइ न जाइ बखानी।
ईश्वर अंश जीव अविनासी चेतन कमल सहज सुखरासी ॥२
सो माया बस भयउ गोसाई, बध्यो कीप मरकट की नाई।
जड़ चेतनहि गंथि परि गई, जदपि मृषा छूटत कठिनाई॥२
तब ते जीव भयो संसारी, छूट न ग्रंथि न होय सुखारी।
श्रुति पुराण बहु कहऊ उपाई, छूट न अधिक २ अरुझाई ॥३
जीव हृदय तम मोह विसेषी, ग्रन्थि छूट किमि परइन देखी।
अस संयोग ईस जब करई, तबहुँ कदाचित सो निरुअरई ॥६

सज्जनो:-जीव और ईश्वर में भेद डालने वाली यदि कोई वस्तु हैं तो माया ही है। माया, अविद्या, अज्ञान, भ्रम यह सब पर्यायवाचक शब्द हैं। बस जब तक माया का पर्दा बीच में पड़ा हुआ है तब तक हम अपने वास्तविक स्वरुप को नहीं देख सकते।

आपने श्री राम लक्षमण और सीताजी के चित्र को देखा होगा, दाहिनी ओर श्रीराम खड़े हैं मध्य में सीता जो और बाई ओर लक्षमण जी खड़े हैं। देखने मैं तो यह एक सुन्दर चित्र सा प्रतीत होता है, परन्तु अन्तरीय इसका अभिप्राय कुछ और है। राम ब्रह्म है ईश्वर है। लक्षमण जीव है और माया है। लक्षमण चाहता है कि मैं रामके साथ एक हो जाऊ परन्तु बीच में खडी हुई सीता रूपी माया उसे

एक नहीं होने देती ।

चौ०- उभय बीच सिय सोहत कैसी ।

ब्रह्म जीव बिच माया जैसी ॥

यही हाल हमारा है, जब तक हमारे अन्दर माया का समावेश है तब तक हमारा ईश्वर के साथ कभी एकी भाव नहीं हो सकता । माया = या + मा अर्थात जो वास्तव में न हो और म से-उसे माया कहते हैं माया नाम छल फरेब और धोखे का है । इसी माया ने तोनो काल में न होने वाले असत्य जगत को सत्य कर दिया है और सर्वदा सत्य स्वरुप आत्मा को असत्य करके दिखाया है सत्य को असत्य और असत्य को सत्य करके दिखा देना इसी का नाम तो माया है

प्रश्न-ऐ 'मेहर' बता तू मुझको सौदा क्या है ?

खुलता नहीं राज कुछ मुइमा क्या है ?

दुनियां नहीं लेकिन नजर आती है मुझे ।

हैरान हूं मैं कि यह तमाशा क्या है ?

उत्तर दुनियाए इ से क्यों तू घबराया है ।

इसका कुछ भेद भी कभी पाया है ॥

यह बूद नमूही है फकत मन का खेल ।

ऐ 'मेहर' इसी का नाम तो माया है ॥

आना देखा है और जाना देखा ।

दुनिया हमने ताना बाना देखा है ॥

यह बूद नमूदी है मदारी का खेल
माया का तमाम कारखाना देखा ॥

सज्जनों-आप कहेंगे ! यदि यह जगत सर्वदा असत्य है। झूट है, भ्रमरूप है तो फिर सच्चा क्यों प्रतीत होता है? दुख सुख का हेतु क्यों है और दिखाई क्यों देता। प्रिय बंधुओ ! आपको विदित होना चाहिये, कि झूटी और सर्वथा असत्य वस्तु भी सच्ची प्रतीत हुआ करेती है, दुःख सुख के हेतुभी होती है और दिखाई भी देती है।

स्वप्न के पदार्थ सर्वथा असत्य है परन्तु यह तीनों बाते इनमें पाई जाती है और जागृत में भी रस्सी में सर्प सर्वदा असत्य झूटा भ्रमरुप है परन्तु सत्य प्रतीत होता है, दु.ख का हेतु भी, और दिखाई भी देता है। यह बात किसी से छिपी हुई नहीं है।

दृष्टान्त नं० ३९

लाला सीताराम जी आयु मे कोई पैतालीस वर्ष के थे उनकी एक धर्मपत्नि और एक लडकी थी। दीपमाला के दिन थे इन दिनो में लडकियां गेरू भिगोकर अपने घरों की दीवारों पर चित्रकारी किया करती है। सीताराम की लडकीने भी एक लोटे में गेरु भिगो रखा था और स्वयं पडोस में खेलने चली गयी थी।

सीताराम जी जब ६ बगे दफ्तर से आये तो वही गेरू

वाला लोटा उठाकर पाखाने को चल दिए जब इसी पानी से सफाई करचुके तो अकस्मात उनकी दृष्टि नीचे की ओर पड़ी, उस समय कुछ अंधेरा हो चुका था, क्या देखते हैं कि समस्त टट्टीमें लहू ही लहू भरा पडा है। ओहो ! आज मेरे अंदर से इतना खून खारज हो गया है। ऐसा विचार आते ही उनका दिल धडकने लगा बड़ो कठीनतासे वह बाहर आये जैसे-तैसे हाथसाफ किए और काँपते हुए चारपाई पर लेट गए।

धर्मपत्नी के पूछने पर बोले पुष्पा की माता ! क्या बताउं ? अभी शौच बेठते समय मेरे अंदर से इतना खून निकला है कि कहा नहो जाता मेरा शरीर बिल्कुल शिथिल होता जा रहा है।

धर्मपत्नी झट डाक्टर के पास दौडी २ गई और बुला लाई। डाक्टर ने देखा तो मालूम हुआ कि नब्ज घटती जा रही है और रंग पीला पड गया है।

डाक्टर साहिब अभी कोई दवाई देने ही वाले थे कि इतने में पुष्पा भी खेल कूद कर आ गई उसने जब अपना गेरु वाला लोट मोरी के करीब रखा हुआ पाया तो चिल्लाकर बोली-मेरा गेरू से भरा हुआ लोटा किसने खाली कर दिया।

यह आवाज जब लाला सीताराम जी के कानों तक पहुँची, तब लाला जी को ज्ञान हुआ-ओहो ! मैं जिसको

खून निकला समझ रहा था, वह तो वास्तव में गेरु घुला पानी था।'

बस फिर क्या था, ! झट मुस्कराते हुए उठ बैठे नजब भी चलने लग गई और चेहरेका रंग भी निखर गया।

भावार्थ यह है कि मनुष्य जब किसी भूल के चक्कर में आजाता है तब उसे सर्वथा असत्य वस्तु भी सत्य २ प्रतीत होने लगती है यही कारण है कि माया से मोहित हुआ जीव सर्वथा असत्य रूप जगत को सत्य मान रहा है।

दृष्टाँन्त नं० ४०

बाजीगर डंक बजाई सब खलक तमाशे आई।
बाजीगर स्वांग सकेला अपने रंग रवे अकेला॥

किसी राजा के पास आकर एक नट दम्पति ने प्रार्थना की कि हम एक अपूर्व नाटक आपको दिखाना चाहते है राजा ने कहा-भले दिखाओ। राजा इतना कह ही रहा था, कि आकाश में एक बडा भयानक शब्द सुनाई देने लगा और राजा तथा सब दरबारी लोग उपर को नजर करके देखने लगे कि यह शब्द कहां से आ रहा है परन्तु किसी को समझ में कुछ बात न आई।

अन्त में नट ने कहा-महाराज ! मेरी समझ में ऐसा आता है कि ऊपर देवताओं और दैत्यों का परस्पर युद्ध छिड गया है और जब तक यह शोर शराबा शांन्त न हो तब तक

हम अपना नाटक भी आपको क्या दिखा सकते है ? इसलिये यदि आप मुझे आज्ञा दे तो मैं पहले इस झगड़े को निपटा आउं फिर निश्चित होकर आपको हम अपना खेल दिखायेगें।

राजा ने कहां-हा ठीक है। जब हमारी एकाग्र वृति होगी तभी तो खेल देघने का भी आनन्द आयेगा।

नट बोला-राजन् ! मुझे एक लम्बां रस्सा मंगवादो ताकि मैं उसके सहारे से ऊपर को जा सकूं। राजा को आज्ञा से झट एक बहुत लम्बा मजबूत रस्सा आ गया जिसे हाथ में खेते हुए नट ने कहा-राजन् ! अब मैं इस हो रहे युद्ध को समाप्त करने जा रहा हूं और जहाँ तक मेरी आशा है देवताओं की जीत करवा कर ही आउंगा। अतः मेरी आपसे यह प्रार्थना है कि मेरे पीछे मेरी नटनो को अपनी रानी न बना लेना बल्कि जब तक मैं आऊं इसे हर प्रकार से सुरक्षित रखना।

नट की यह बात सुन कर सब सभा हंसने लगी। मंत्री ने कहा-अरे नट ! तू यह क्या कह रहा है ? क्या राजा साहिब को रानीयो की कमी है जो तेरी इस नटनो को रानी बना लेगें ?

नट बोला-महाराज ! यह बात तो मैं भी जनता हूंकि इन्हें रानीयों की कमी नहीं है मगर फिर भो कहना मेरा कर्त्तव्य है क्योंकि मेरे पास तो केवल यही एक सहारा।

मन्त्री ने कहा-तुम किसी प्रकार की चिन्ता न करो जब तक तुम नही आओगे, हम हर तरह से इसकी रक्षा करेंगे नट बोला-तो बहुत अच्छा! अब मैं जाता हूं। ऐसा कहकर नट ने रस्सेका एक सिरा अपने हाथमें रखा और बाकी पिन्ने को जोरसे ऊपर आकाश की ओर फेंका जिससे कि वह सीधा ऊपर चला गया और आकाशमें जाकर स्तब्ध हो गया और नट उसके सहारे से उपर चढ़ गया यहां तक कि नजर से लोप हो गया।

दिन के पिछले पहर कोई चार बजे जबकि समस्त दरपार लगा हुआ था अकस्मात ऊपरसे एक धड़ पृथ्वी पर आ गिरा जिसे सबने देखा और उस नटनो ने भी देखा, तो छाती पीटकर रोने लग गई और बोली-यह धड़ तो मेरे पति का मालूम होता है दैत्यों द्वारा उनका सहार हो गया है अब मेरा जीना व्यर्थ है इसलिए मुझे इसके साथ सती कर दिया जाए।

इस कौतुक को देखकर सबको बडा आश्चर्य व दुःख हुआ कि इन बेचारों पर क्या विपत्ति पड़ गई? चार पैसे कमानेके लिए आये थे और मौत के घाट उतर गये।

आखिर सबने समझाया बुझाया कि कुछ धैर्य रखो हो सकता है, यह किसी और का धड हो और तुम्हारे पति जीवित ही हों क्योंकि चेहरे के बिना पूरी पहचान नहीं हो

सकती कि यह धड किसका है।

खैर जैसे तैसे रात्रि व्यतीत हुई, दिन चढ़ने पर जब फिर दरबार लगा तो थोडी देर बाद धड का ऊपरी भाग नीचे आ गिरा, जिसे सबने देखा और उसको नटनी ने भी देखकर कहा लो ! अब तो तुम्हें कोई शक नहीं रहा ? यह चेहरा तो मेरे पति का ही हैं ना? इसलिये अब मुझे मेरे पति के साथ सती कर दिया जाए, अब मैं जीवित रहकर क्या करुंगी ?

राजा सहित समस्त दरबार ने उस चेहरे को देखा और निश्चय किया कि वास्तव में वह उसी नट का ही समस्त शरीर है।

बस फिर क्या था। लकड़ियों की चित्ता तय्यार करदी गई और वह नटनी अपनी पति के शरीर के साथ जल कर स्वाह हो गई।

इस विचित्र सी घटना को देखकर सबके नेत्रोमें अश्रु बह निकले कि इन बेचारों के साथ क्या अनर्थ हुआ ? अस्तु

दिन के पिछले पहर जबकि समस्त दरबार लगा हुआ था अकस्मात वह नट उस रस्से की राह से उतरता हुआ दिखाई दिया और राजाके पास आकर बोला-राजन ! आपको जय हो। आपकी कृपासे देवताओं की जीत हुई और दैत्य भाग गए। लाओ मेरी नटनी कहां है ? उसके साथ

मिलकर हम नाटक दिखायें।

अब तो सब के आश्चर्य की कोई सीमा न रही और सोचने लगे कि उसे उत्तर क्या दें ?

नट ने फिर कहा-महाराज क्या सोच रहे हो ? मेंरी धर्मपत्नी मुझे दो ताकि मैं उसके साथ मिल कर नाटक प्रारम्भ करुं।

इस पर राजा ने कहा-भाई बात असल यह हैंकि कल सांयकाल चार बजे के लगभग पहले तुम्हारा धड़ गिरा जिसे देखकर तुम्हारी नटनी कहा कि यह धड़ मेरे पतिका है वह मारा गया है इसलिए मुझे भी इसके साथ ही सती कर दिया जाए। जैसे तैसे हमनें उसे रोके रखा परन्तु आज दिन चढ़ने पर जब तुम्हारा सिर गिरा तब तो इसने अधीर होकर कहा कि अब मेरा जीवन व्यर्थ हैं अतः मुझे मेरे पतिके साथ सती कर दिया जाए। सो भाई ! ऐसा ही किया गया, वह तो तुम्हारे साथ सती हो चुकी है, वह देखो चिता जल रही है।

राजा के मुख से यह बात सुनकर नट ने आश्चर्य प्रगट करते हुए कहा-महाराज ! क्या आप मुझे बिल्कुल बुद्धू ही समझ रहे हैं, भला जब मैं जीवित हूं तब मेरी नटनी किसके साथ सती हो गई ? यह तो बात वही हुई ?

दृष्टांन्त नं० ४१

एक लाला जी गुडगांव में नौकर थे उनकी धर्मपत्नी देहली में रहती थी, एक दिन नाईन (नाई की स्त्री) उनके घर में आई, उस समय लालाजी की धर्मपत्नी नत्थ (नाक का गहना जोकि उस समय सुहाग का चिन्ह गिना जाता था) को उतारे बैठी थी शायद मुंह धोना चाहती थी मगर नाथ का उतारना विधवा का चिन्ह गिना जाता था। इसलिए वह उल्टे पांव अपने घर दौड़ी आई और अपने पति से बोली गुलाबो के पिता! तुम्हें खबर भी है कि फलां लाला जी गुड़गांवा में नौकर हैं उनकी औरत विधवा हो गई है, जा इसी समय गुड़गावाँ पहुंच जा।

नाई ने झट कुर्ता गले में डाला, सोटी हाथ में पकड़ी और चल दिए गुड़गावा को। २०-२२ मील का सफर क्या चीज थी, सायंकाल होने से पहले ही जा पहुंचे।

लालाजी अभी दफ्तर से आकर बैठे ही थे कि नाईने भी दरवाजा आन खटखटाया। लालाजी ने दरवाजा खोला तो नाई ने अपने सिर को पीटते हुए कहा-लालाजी! यहां बैठो क्या कर रहे हो। देहली तो तुम्हारी औरत विधवा हो गई है।

यह सुनकर लालाजी ने भी रोना और सिर पीटना शुरु कर दिया, इतने में मुहल्ले के सब लोग जमा हो गए और

बोले-लाला जी ! क्या गजब हो गया जी आप इस प्रकार रो रहें हैं ?

लाल जी ने आर्त स्वर से कहा-भाई, क्या बतलाऊं । घर से नाई आया है और यह मनहूस खबर लाया हे कि मेरी औरत बेवा (विधवा) हो गई है । इतन कहकर लाला जी फिर रोने लगे ।

लोगों कहा-लाला जो ! जब आप जीते जागते यहां उपस्थित हैं तब आपकीं औरत क्यों विधवा हो सकती है ?

इस पर लाला जी एक और दोहत्थड अपने सिरपर मारा और बोले-वाहजी वह ! यह नाई हमारे पितामह से चला आया है मैं इसकी बात सत्य मानूं या तुम्हारी और फिर यह भी कोई बात है कि कि मेरे जीवित होते मेंरी बहूं बिधवा हो ही नहीं सकती । मेरे देखते२ मेरी माता विधवा हो गई, मेरी बहिन विधवा हो गई मेरे पडोस में एक स्त्री रहती थी, वह विधवा हो गई तो क्या मेरे जीतेजी मेरी औरत विधवा नहीं हो सकती ? यह कहकर लालाजी फिर रोने लगे ।

नट बोला-राजन ! आप मुझे भी उन लालाजो की तरह बुद्धू न समझे जब मैं जीता जागता आपके सामने खडा हूं तब मेरी औरत किसके साथ सती हो गई ? महाराज ! मैं पहले ही आपसे प्रार्थना कर गया था कि यदि मेंरे आने में

कुछ देर हो जाए तो मेरी नटनीको अपने घर न डाल लेना।

इस पर राजाने कहा-भाई ! हम सत्य कहते हैंकि हमने तुम्हारी नटनीको अपने घर नहीं डाला।

नट बोला-महाराज ! यदि मेरी नटनी आपके महल से निकल आए तो फिर ? राजा ने कहा-फिर १० हजार रुपया तुम्हें इनाम दिया जायगा।

यह सुन कर नट झट से सामने राजा के महल के पास पहुचा दरवाजा खटखटाते हुए आवाजदी-अरी नत्थू की मां ! यह शब्द सुनते ही नटनी ने झटसे किवाड खोला और बाहर आकर रोती हुई बोली अजी ! महाराजा साहिब ने मुझे अपने घर में डाल लिया था बडा अच्छा हुआ जो तुम आ गए। मेरा धर्म बच गया।

नट अपनी नटनी को भुजा से पकड़े हुए दरबार में राजा के पास ले आया और बोला-राजन ! हमारा नाटक समाप्त हुआ अब इनाम दीजिये।

राजा ने १० हजार रुपया दे दिया जिसे लेकर वह बडी प्रसंशा से घर को चले आये।

सज्जनों ! जब एक साधारण नट की माया में यह शक्ति है कि वह झूठ को सत्य करके दिखा सकता है तो फिर यदि नटों के भी नट भगवान की माया से हमें सर्वथा असत्य रुप जगत सत्यरुप प्रतीत होने लगे और दुःख सुख का हेतु भी

हो तो इसमें अचम्भा ही क्या है ?

भगवान की माया अनेकों रूपों में परिणित होकर जीवों को मोहित कर रही हैं। किसी को स्त्री के रूप में किसी को पुत्र के रूप में, किसी को धन सम्पति के रूप में किसी को हुस्न जवानी और मान प्रतिष्ठा आदि के रूप में इस प्रकार सब जीव माया से मोहित संसार के चक्कर में घूम रहे हैं।

दोहा

तुलसी माया नाथ की घट आन अड़ी
किस किस को समझाइये कुएं भाँग पडी ॥

सज्जनों ! अब आप प्रश्न करेंगे कि क्या कोई ऐसा उपाय भी है जिससे भगवान की इस दुस्तर माया को तरा जा सके ?

क्यों नहीं भगवान की अनन्य शरणागति ही इसका एक मात्र उपाय है। भगवान श्रीकृष्णचन्द्र जी स्वयं अपने मुखारबिन्द से गीता में कहा है:—

दैवीह्येषा गुणमयी, मम माया दुरत्यया ।
मामेव ये प्रपद्यन्ते, मायामेता तरन्ति ते ॥ ७-१४

अर्थ क्योंकि यह आलौकिक अर्थात् अति अद्भुत त्रिगुण मयी मेरी योगमाया बड़ी दुस्तर है परन्तु जो पुरुष मेरे को ही निरन्तर भजते हैं वह इस माया को उल्लंघन कर जाते हैं अर्थात संसार से तर जाते हैं।

तेषामंह समुद्धर्ता मृत्यु संसार सागरात् ।
भवामि नचिरात् पार्थ ! मय्यावेशित चेतसाम् ॥

हे अर्जुन ! उन मेरे में लगे हुए चित्त वाले प्रेमी भक्तों का मैं शीघ्र ही मृत्यु रूप संसार समुद्र से उद्धार करने वाला होता हूं । १२-७

चौपाई

जग पेखन तुम देखन हारे, विधि हरि संभु नचावनि हारे ।
तेऊ न जानहि मरमु तुम्हारा और तुम्ही को जानन हारा
सोई नानइ जेहि देहु जनाई जानत तुम्हहि तुम्हइ होइ जाई
तुम्हरिहि कृपा तुम्हहि रघुनन्दन, जानहि भगत२ उर चन्दन

कहे कबीर ठग स्यों मन मानया ।
गई ठगौरी जव ठग पहचानया ॥
माया को सव जग भजे माघव भजे न कोय ।
जो कोय माधव भजे माया चेरी होय ॥

॥ हरि ओ३म् तत्सत्

आत्म स्वरूप की चेतावनी

भजन

गाफिल तूं जाग देख क्या तेरा स्वरूप है ।
किस वास्ते पड़ा जन्म मरन के कूप है ॥ टेक
यह देह गेह नाशवान है नहीं तेरा ।
वृथा अभिमान जाल में फिरे कहाँ घिरा ॥
तूं तो विनास से परे सदा अनूप है ।
गाफिल तूं जाग देख क्या तेरा स्वरूप है ॥ १
भेद दृष्टी कीन जभी दीन होगया ।
स्वभाव अपने से आप हीन होगया ॥
विचार करके देख तूं भूपों का भूप है ।
गाफिल तूं जाग देख क्या तेरा स्वरूप है ।
तेरे प्रकाश से शरीर चित्त चेतता ।
तूं देह तीन दृष्य को सदा है देखता ॥
दृष्टा नहीं होता कभी दृश्य रूप है ।
गाफिल तूं जाग देख क्या तेरा स्वरूप है ॥ ३
कहते हैं 'ब्रह्मानन्द' ब्रह्मानन्द पाईये ।
इस बात को विचार सदा दिल में लाईये ॥
तूं देख जुदा करके जैसे छाया धूप है ।
गाफिल तूं जाग देख क्या तेरा स्वरूप है ॥

तूं देख जुदा करके जैसे छाया धूप है
गाफिल तूं जाग देख क्या तेरा स्वरूप है ।

श्लोक

श्लोकार्धेन प्रवक्ष्यामि यदुक्त ग्रन्थ कोटिभिः ।
ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या जीवा ब्रह्मं व केवलम् ॥

अर्थ— जो सिद्धान्त करोड़ों ग्रन्थों द्वारा कहा गया है उसे मैं आधे श्लोक द्वारा कहता हूं कि ब्रह्म सत्य है जगत् मिथ्या है और जीव केवल ब्रह्म ही है ।

प्रिय सज्जनों ! सम्पूर्ण वेद शास्त्र ऋषि मुनि महात्मा अनादि काल से यह चेतावना देते आ रहे हैं कि हे जीव तू सत् चित और आनन्द स्वरूप है जन्म मरन रूप विकार तेरे में कोई नहीं तू अपने स्वरूप को पहचान और दीन न बन ।

कवित्त—दीनता को त्याग नर अपनो स्वरूप देख ।
तूं तो शुद्ध ब्रह्म अज दृश्य को प्रकाशी है ।
अपने अज्ञान ते जगत सब तूं ही रचे ।
सर्व जो संहार करे आप अविनाशी है ॥
मिथ्या प्रपंच देख दुःख जिन आन जिए ।
देवन की देव तूं तो सब सुखराशि है ॥
जीव जग ईश होय माया ते प्रभा से तूं ही ॥
जैसे रज्जू सांप, सीप रूप, ह्वै प्रभासी है ॥

प्रिय आत्माओ ! मनुष्य स्त्री, पुत्र, धनादि का त्याग करके भी अपने आप की रक्षा करता है, कि इससे सिद्ध होता है कि अपना आप सबसे प्यारा है। स्त्री पुत्रादि में जो प्यार है वह स्वभाविक नहीं, स्वभाविक प्यार इसका अपने आप में ही हैं।

यहां अपने आप शब्द का अर्थ अपना शरीर है परन्तु अपना शरीर भी इसका अत्यन्त प्यार नहीं शरीर की अपेक्षा इन्द्रियों में अधिक प्यार है। जब कोई हम पर वार करता हैं तब हम अपनी आंख कान नाकादि इन्द्रियो को बचाते और छिपाते हैं और शेष शरीर पर चोर को सहन कर लेते हैं।

फिर इन्द्रियों से अधिक प्राण प्यारे हैं यदि आंख, कान, नाकादि किसी इन्द्रियों के नाश कर देने पर भी प्राण बचते हों तो मनुष्य उस इन्द्रिय का त्याग करके भी अपने प्राणों की रक्षा करता है। प्राणों से भी प्यारी आत्मा है और वही वास्तव में इसका अपना आप है उसी में सबका मुख्य प्यार है क्योंकि जब कोई मनुष्य इस शरीर के हाथो अत्यन्त दुःखी हो जाता है तब कहता है कि मेरे प्राण चले जाये तो मैं भी सुखी हो जाऊं।

वह सुख स्वरुप ज्ञान स्वरूप और आनन्द स्वरूप अपन आत्मा ही है जो इसे हर समय हर घड़ी प्राप्त है उसे प्राप्त

करने को दो चार कोस जाने को जरूरत नहीं, अपने आप मिलने के लिए भी भला कहीं जाया जाता है ? कोई मनुष्य यह कहे कि मैंने अपने आपको पाना है बताओ उसे कितनी दूर जाना पड़ेगा ? एक कदम नहीं, अपना आप तो इसे नित्य प्राप्त है ।

ढूंढता फिरता हूं मैं, इकबाल अपने आपको ।
आप ही हूं मैं मुसाफिर आप ही मंजिल हूं मैं ॥

हैरानी तो इसी बात की है को जो वस्तु इसे नित्य प्राप्त हैं उसकी खोज में मारा२ फिर रहा है तथा जो इसके स्वरूप में सर्वथा है ही नहीं उसे दूर करने के लिए अहनिश प्रयत्न कर रहा है । आनन्द इसका निजी स्वरूप और वह इसे नित्य प्राप्त है परन्तु यह उसकी तलाश में मारा २ फिर रहा है । दुःख इसके स्वरूप में बिल्कुल है नहीं परन्तु उसको दूर करने के लिए दिन रात प्रयत्नशील हो रहा है ।

जरा विचार कीजिये । एकमनुष्य के सिर पर टोपी है नहीं परन्तु वह बारम्बार सिर पर हाथ घुमाकर उसे उतारने की चेष्टाकर रहा हैं तथा कुर्ता पहन रखा है परन्तु फिर भी बारम्बार कुर्ता बहनने की सी चेष्टा कर रहा है उसकी इस हरकतको देखकर लोग उसे क्या कहेंगे यही कहेंगे कि यह पागल होगया है क्योंकि जो चीज उसके सिरपर है नहीं उसे उतारनेकी कोशिश कर रहा है तथा जो चीज प्रथम

ही पहन रखी है उसे पुनः पहनने का यत्न कर रहा है।

यही हाल हमारा है दुःख हमारे स्वरूप में बिल्कुल ही नहीं परन्तु हम सभी उसे दूर करने के लिए दिन रात लगे हुए हैं तथा आनन्द यानि सुख हमैं नित्य प्राप्त है। परन्तु उसे प्राप्त करने का प्रयत्न कर रहे हैं। यही अज्ञानता है वहम भ्रम है।

ऐ मृग ! तेरी सुगन्ध से चमन भया भरपूर
कस्तूरी तेरे पास है क्यों धावत है दूर है ॥१
ज्यों तिल मांहि तेल है ज्यों चकमक में आग
तेरा सांई तुझ में जाग सके तो जाग
ज्यों नैनन में पूतरी त्यों खालक घट मांहिं।
मूरख लोग न जानई बाहर ढूंढन जांहि ॥३

कहते है एक नगर से दस मनुष्य किसी कार्य के लिए दूसरे नगर कों चले। उनमें नगर के एक चौधरी साहिब भी थे। सब उन्हें बुद्धीमान समझते थे तथा सम्मान करते थे। रास्ते में एक पानी का नाला पड़ा तब चौधरी साहिब बोले देखो भाईयो ! पानी से गुजरना हे कहीं ऐसा न ही कि हम मैं से कोई डूब जाये इसलिए मैं अपने सिर की पगड़ी उतारता हूं इसे कसकर कमर से बांध लो ताकि किसी के डूब जाने का भय न रहे।

चौधरी साहिबकी इस बुद्धिमत्ता पर सबने धन्य२ कहा तथा उस पगडोको सबने खूब जोर से अपनी२ कमरेके साथ बाँध लिया और नाले में उतर गए। प्रभु की कृपा से पानी ज्यादा गहरा न था इसलिये सुगमता से ही सब पार हो गए

पार होकर फिर चोधरी साहिब वोले-सब वैठो ? गिन लेवें, हम में से कोई आदमो डूबा तो नही ? इस पर फिर सबने चौधरी साहिब को भूरि २ प्रशन्सा की और बैठ गये तब चौधरी साहब ने स्वयं खड़े होकर उनको गिनना शुरु किया।

एक दो तीन चार पाँच छः सात आठ नौ (स्वयं को भूल गए) और बोले-हैं ! दसवां मनुष्य कहां गया ? हाय हाय डूब गया, मैं नगरमें जाकर क्या मुह दिखलाउंगा ?यह कहकर चौधरी साहिब जोर२ से रोने लगे। उन्हें रोते देख कर दूसरे भी रोने लग गये।

कोई एक सज्जन पुरूष थोडी दूरी पर खडे यह सब तमाशा देख रहे थे, वह पास आकर बोले-अरे ! तुम क्यों रोते हो ? सबने एक स्वर में कहा-हममें से एक आदमी डूब गया है हम दस थे नौ रह गए।

यह सज्जन खिलखिलाकर हंसे ओर बोले-भाई ? चौधरी साहिब ही तुम सबमें बुद्धिमान और प्रधान है उनके होते हुए भला तुम मेरी बात कब मानने हो वाले ?

इस पर चोधरी साहब कुछ बिगड़ कर बोले-तुम मेरेसे और अधिक बुद्धिमान कहाँ से आगये ? लो, आपके सामने फिर गिन देता हूं ।

यह कहकर उसने फिर गिनना शुरू किया। जब नौपर पहुँचा तो अपने मुंह पर एक चपत मारते हुए बोला-लो ! अब बताओं दसवां कहाँ है।

इधर इस सज्जन ने भी झट एक चपत उसके मुंह की दूसरी ओर रसीद करते हुए कहा-दसबां तूं है ।

चपत खाकर चौधरो साहब और उनके सब साथी इस सज्जन के चरणो में गिर पड़े और बोले-आपने अपार कृपा करके हमारे गम को दूर कर दिया, नहीं तो हम चिन्ता से घुले जा रहे थे ।

प्रिय बंधुओ ! इसी प्रकार कई और दृष्टांन्त दिए जा सकते है। जिनसे यह सिद्ध हो जाता कि भूल अथवा अज्ञान केकारण प्राप्त वस्तुभी अप्राप्त के बराबर हो जाया करती है।

इसी भूल के कारण जीव अपने नित्य प्राप्त 'सत्‌चित्' आनन्द स्वरूप को भूला हुआ है, इसी वास्ते इसे श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ गुरु की जरूरत है, जब तक यह अपने आपको जन्मने मरने वाला, कर्त्ता भोक्ता, संसारी मानता है। तबतक यह बधां हुआ है और जब अपने आपको नित्य शुद्ध बुद्ध मुक्त स्वरूप मानने लग जायेगा, तब आजाद हो जाएगा ।

'बन्दी में बन्दा खुलासा खुदा

शेयर—अपनी खुदी ही पर्दा है दीदार के लिए।
वरनां वह कब जुदा हैं तलबगार के लिए ॥
किधर का पर्दा कहां की दुई कब उसका मुखड़ा नकाब में है
है कसूर अपनी निगाह का है वर्ना कब वह हजाब में है ॥

जब गुरूदेव की कृपा से इसका भ्रम भूत निवृत हो जाता है और अपने शुद्ध ब्रह्मस्वरुप को पहचान लेता है तब निःशंक होकर कहता है —

श्लोक

मनो बुद्धयरहंकारं चित्तातिन नाह,
नच श्रोत्र जिह्वे नच घ्राण नैत्रे
नच व्योमभूमि न तेजो न वायुः
चिदानंद रूपः शिवोऽहं शिवोऽह ।
अहं निर्विकल्पो निराकार रूपो,
विभुर्व्याप्या सर्वत्र सर्वेन्द्रियाणि ।
सदा मैं समत्वं न मुक्तिर्न बन्धः
चिदानन्द रूपः शिवोऽहं शिवोऽहं ॥

दृष्टान्त नं० ४३

आत्माज्ञान के दृष्टीकोण से कभी हमारा भारतवर्ष उन्नति के शिखिर पर था भारत के ज्ञानी और शूरवीर योद्धा वास्तव में अपने आपको अजर आत्मा अमर आत्मा ही

समझते थे। उनकी अपने इस पंच भौतिक नश्वर शरीर में आत्मबुद्धि न थी वह देश, जाति और धर्म की रक्षा के लिए हंसते २ अपने शरीर का बलिदान कर दिया करते हैं

कहते हैं सिकन्दर बादशाह जिस समय यूनान से भारत में आने लगा तो उसके गुरु सुकरात ने कहा-तुम भारत में जारहे हो, वहां की तीन चीजें प्रसिद्ध हैं गंगाजल गीता और ज्ञानी, इसलिए तुम वापसी पर हम तीनों को मेरे कल्याण के लिए अवश्य लेते आना।

सिकन्दर 'सत्‌वचन' कहकर चल पड़ा और भारत में आगया, जब वापस जाने लगा तब गङ्गाजल भी ले लिया और गीता भी। अब ज्ञानी महात्मा की खोज करने लगा ज्ञानी महात्मा की पहचान भी कोई बिरला ही कर सकता है क्योंकि किसी महात्मा के मस्तक पर लिखा तो होता नहीं कि यह ज्ञानी है और बाहरी चेष्टा उन ज्ञानियों की वैसे ही होती है जैसे कि हमारी। इसलिए आम लोग कहने लग जाते हैं कि ज्ञानी तो कोई हैं ही नहीं क्योंकि जैसे हम खाते पीते सोते जागते हैं उसी प्रकार ज्ञानी भी खाता पीता सोता जागता है। फिर हममें भी और ज्ञानी में भेदक्या रहा?

प्रिय बन्धुओ! यह बात नही है यद्यपि बाहर से तो हमारी और उनकी समता है परन्तु अंदर की अवस्था में महान अंतर है। हम देहवादी हैं वह आत्मवादी है हम जीव है

वह ईश्वर हैं। स्वर्ण और पीतल का भेद तब हो जाना जा सकता है जबकि उसे अग्नि में तपाया जाय वरना चमकने मात्र में तो दोनों बराबर ही हैं।

शेअर

चमकना हो अगर सोने के जेवर की अलामति हो।
तो क्या पीतल के जो गहने हैं चमकीले नहीं होते॥

बहुत तलाश करनेपर सिकन्दर को 'कल्याणदास' नाम के एक ज्ञानी महात्मा मिल गये। सिकन्दर ने हाथ जोड़ कर प्रार्थनाकी भगवन् आप मेरे मुल्क यूनानमें चलिए परन्तु ज्ञानी महात्माको किस बातका लोभ था। जो वहां जाते।

लेकिन जब सिकन्दर ने बहुत मिन्नत समाजित की, तब महात्मा साथ जाने को तय्यार हो गए और चल पड़े। चलते चलते अभी यूनान की भूमि में चरण ही रखे थे कि महात्मा को ज्वर आने लग गया।

महात्मा वहीं रुक गये और बोले अब हम इस शरीर को छोड़ना चाहते हैं। सिकन्दर ने कहा-भगवन्! चिन्ता न करें मेरे मुल्क में बड़े२ लायक हकीम हैं मैं उनसे आपका इलाज करा दूंगा और आप राजी हो जायेंगे।

महात्मा बोले चिन्ता की तो कोई बात नहीं परन्तु जो मकान पुराना हो जाता है उसे म्युनिसिपैल्टी गिरा देती है जो राजा होता है वह गन्दे मकानमें कभी नहीं रहता।

भारत मेरी १०० वर्ष की आयु होगई किन्तु मुझे आज तक कभी ज्वर नहीं आया और न मैंने आज तक किसी औषधि का सेवन ही किया है अभी तो मैंने तुम्हारे मुल्क में कदम ही रखा है तो यह दशा हुई यदि वहां रहने लग गया तो जाने क्या होगा? मैं अपने आत्मदेव राजा को अब ऐसे अपवित्र शरीर में नहीं रखना चाहता।

महात्मा ने उसी समय चन्दन की चिता बनाकर उसे एक ओर से अग्नि लगा दी और स्वयं पद्मासन बांधकर उस पर बैठ गया और शिवोऽहं२ कहते हुए प्राण छोड़ दिए।

वाह ! क्या जां से गुजर जाते हैं गुजरने वाले।
मौत की राह ही नहीं देखते मरने वाले॥

सिकन्दर भारतवासी इस ज्ञानी महात्माके निश्चय को देखकर चकित रह गया और उस ज्ञानी महात्मा के शरीर की भस्म ले जा कर अपने गुरू सुकरात को दी और सारी बात भी कह सुनाई। सुकरात ने बड़े आदर के साथ उस भस्म को अपने मस्तक पर लगाया।

चेतावनी

वही आत्मा सच्चिदानन्द मैं हूं।

बने ध्यान में जिसके ध्यानी हैं मंजनूं
हुए ज्ञान पर जिसके ज्ञानी हैं मफतूं

पढ़ा जिसा जोगी जीतने है अफसूं
वही आत्मा सच्चिदानन्द मैं हूँ ॥१

कर्म जिसके मिलने को करता है कर्मी
धर्म जिसके मिलने करता हैं धर्मी
मर्म जानता है फकत जिसा मर्मी
वही आत्मा सच्चिदानन्द मैं हूं ॥२

जिसे यज्ञ और दान से ढूंढते हैं,
जिसे तप से और ज्ञान से ढूढंते हैं।
जिसे धारणा ध्यान से ढूंढते हैं,
वही आत्मा सच्चिदानन्द मैं हूं ॥३

न अगाज जिसका न अंजाम जिसको
जहां देखिये जत्वा ए आम जिसका
हर इक शक्ल जिसकी हर ईक नाम जिसका
वही आत्मा सच्चिदा नन्द मैं हूँ ॥४

जिसे सुनके इंसान कहता नहीं हैं
जिसे देखकर होश रहता नहीं है।
जिसे पाके दुःख कोई सहता नही हैं
वही आत्मा सच्चिदानन्द मैं हूं ॥५

किसी शै की हस्ती नहीं जिससे बाहर
हरइक नूर जिस नूरसे है मुनव्वर

जो बेमिस्ल आनन्द का है समुद्र,
वही आत्मा सच्चिदा नन्द मैं हूँ ॥६

जिसे मेहर' मोजूद माना है सबने,
जिसे अपना मकसूद माना हैं सबने।
जिसे गेर महबूद माना है सबने,
वहीं आत्मा सच्चिदानन्द मैं हूं ॥७

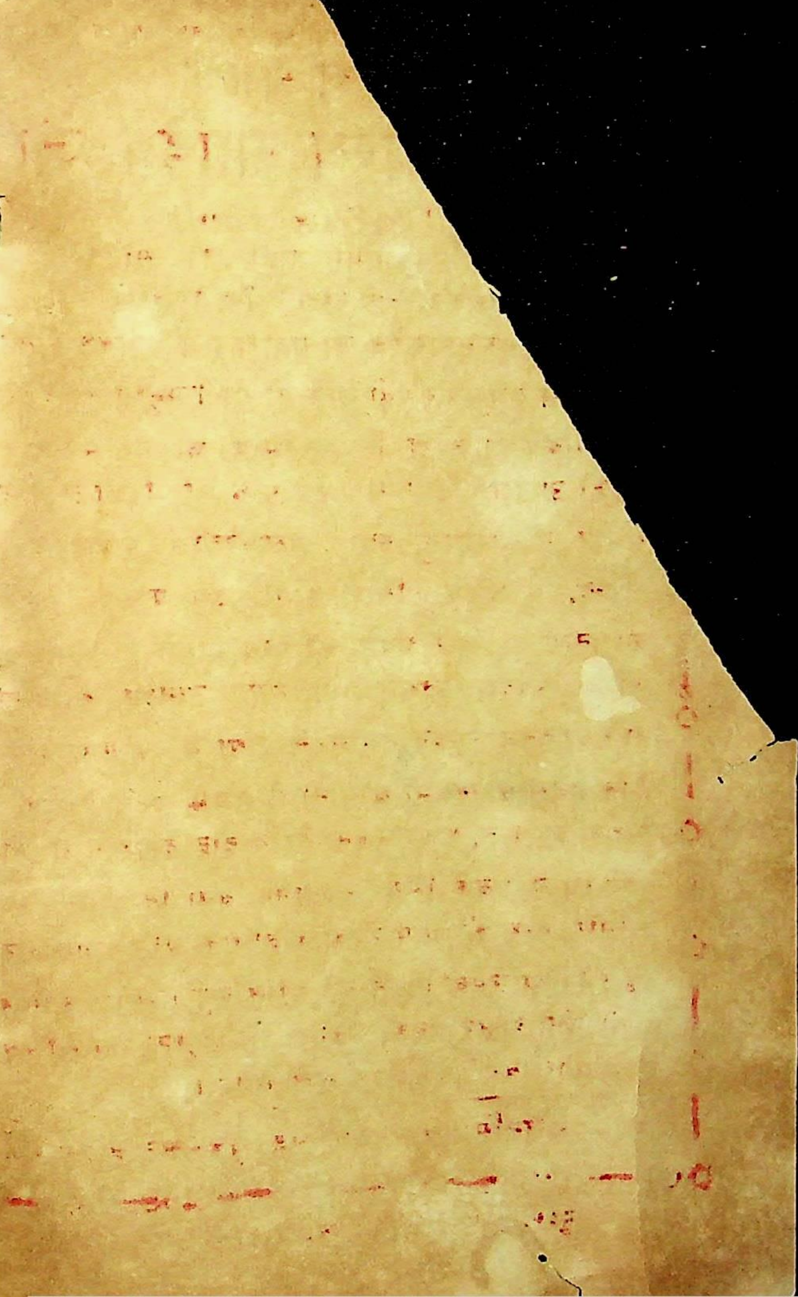
भजन

रमज बारीक हमारी कोई समझे सत् जवाहरी ॥ टेक
सिन्धु समान स्वरूप हमारा ओत पोत हमारा बिस्तारा।
जानत न संसारी, कोई समझे संत जवाहरी ॥ १
उत्पत्ति स्थित मुझ में होवे, लय होके भी आन मिलोवे
एहि जो सृष्टि सारी कोई समझे संत जवाहरी ॥ २
पांच भूत के हैं जो मन्दिर, जोत जगे हमरी सब अंदर
चोदा देव पुजारी, कोई समझे संत जवाहरी ॥ ३
'परमानन्द' कोई ज्ञानो जाने, अज्ञानी तो कभी न माने
जो हम बात उचारी, कोई समझे संत जवाहरी ॥ ४



* हरि ओ३म् तत्सत् *

मुद्रक:—अमर प्रिन्टिग प्रेस, हरकी पैड़ो, हरिद्वार।



भक्ति ज्ञान बैर

जो बे

वही

जिसे मेहर' मोजूद म

जिसे अपना मकसूद

रमज

सिन्ध